मैथिली

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'

भीमनाथ झा

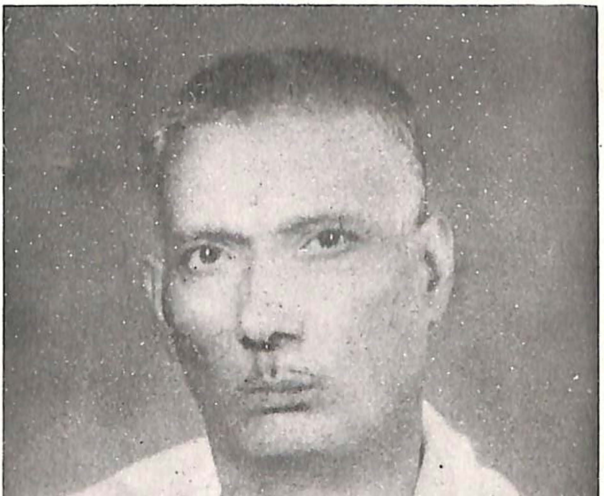

MT
817.231 092
T 326 J

भारतीय
साहित्यक

MT
817.231092
T 326 J

INDIAN INSTITUTE
OF
ADVANCED STUDY
LIBRARY, SHIMLA

अस्तरपर छपल मूर्तिकलाक प्रतिरूपमे राजा शुद्धोदनक दरबारक ओ दृश्य देल गेल अछि जाहिमे तीन गोट भविष्यवक्ता भगवान बुद्धक माय रानी मायाक स्वप्नक व्याख्या कए रहल छथि। हिनका लोकनिक नीचाँमे एक गोट देवानजी बैसल छथि जे ओहि व्याख्याकेँ लिपिबद्ध कए रहल छथि। भारतमे लेखनकलाक ई प्रायः सभसँ प्राचीन एवं चित्रलिखित अभिलेख थिक।

नागार्जुनकोण्डा, दोसर शताब्दी
सौजन्य : राष्ट्रीय संग्रहालय, नयी दिल्ली

भारतीय साहित्यक निर्माता

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'

लेखक

भीमनाथ झा

साहित्य अकादेमी

Upendra Thakur 'Mohan' : A monograph in Maithili by Bhimnath Jha on the Maithili poet. Sahitya Akademi, New Delhi (1995), Rs. 15.

Library IIAS, Shimla
MT 817.231 092 T 326 J
00117156

© साहित्य अकादेमी

प्रथम संस्करण : १९९५

साहित्य अकादेमी

प्रधान कार्यालय

रवीन्द्र भवन, ३५, फ़ीरोज़शाह मार्ग, नयी दिल्ली ११० ००१

विक्रय विभाग : 'स्वाति', मन्दिर मार्ग, नयी दिल्ली ११० ००१

क्षेत्रीय कार्यालय

जीवनतारा बिल्डिंग, चौथा तल्ला, २३ ए/४४ एक्स.,
डायमंड हार्बर रोड, कलकत्ता ७०० ०५३

३०४-३०५, अन्ना सालई, तेनामपेट, मद्रास ६०० ०१८

१७२, मुम्बई मराठी ग्रन्थ संग्रहालय मार्ग,
दादर, बम्बई ४०० ०१४

ए डी ए रंगमन्दिर, १०९, जे. सी. मार्ग, बैंगलौर ५६० ००२

मूल्य : पन्द्रह टाका

ISBN 81-7201-892-4

मुद्रक : वैलविश पब्लिशर्स,
पीतमपुरा, दिल्ली ११० ०३४

MT
817.231092
T326 J

Indian Institute of Advanced Study
117156
10.12.04
SHIMLA

आभार

आभारी छी साहित्य अकादेमीक, जकर सदाशयताक कारणेँ कविवर उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'क जीवन आ साहित्यपर लिखबाक सुअवसर हमरा प्राप्त भेल ।

आभारी छी ओहि समस्त विद्वान्-समीक्षकक, जनिक निबन्ध-समीक्षा-टिप्पणीसँ हम लाभान्वित भेलहुँ ।

आभारी छी मोहनजीक दौहित्र श्री विनयकान्त ठाकुरक, जे हुनक जीवनक प्रसंग किछु महत्त्वपूर्ण सूचना देलनि आ हुनक फोटो सेहो उपलब्ध करौलनि ।

आ, भारी मनसँ स्मरण करैत छियनि चरित-नायक महान् कविक, जे अपन निर्मल स्नेहक छाहरि-तर ठाहर दऽ शीत-ताप-झंझाक झोँकसँ बचबैत रहलाह—पूरे साढ़े सात वर्ष धरि ।

हुनक स्मृतिसँ मन-प्राण पवित्र होइत रहत —जीवन भरि !

—भीमनाथ झा

स्थापना

वर्तमान पीढ़ीक प्रथम पंक्तिक कविलोकनिमे, जाहिमे आब किछुए गोटे सौभाग्यसँ जीवित छथि, एहन नक्षत्र सभक उदय भेल जे मैथिली कविताकेँ चिरकाल धरि प्रभावित करैत रहताह । एहन नाम आठ-दस धरि जा सकैछ । एहिमे, साहित्यपर दीर्घकालीन छाप छोड़निहारक दृष्टिएँ के 'प्रथम' छथि, से कहब तँ कठिन, आ प्राय: समयपूर्व सेहो, मुदा 'उत्तम'मे एक नाम थिक उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'क, ई निर्विवाद अछि । शब्दक सामान्य अर्थसँ अधिक, गूढ़ अर्थमे सेहो 'मोहन'क कविता 'साहित्य' थिकनि आ ओही अर्थमे ई ओकर स्रष्टा - 'निर्माता' छलाह ।ई जाहि साहित्यक, आ जाहि कोटिक साहित्यक निर्माण कयलनि, तकर महत्त्वकेँ उद्घाटित कयनिहार समीक्षक ओ प्रशंसक, हिनक आन किछु समकालीन मित्र जकाँ, हिनका लगले नहि भेटलनि । फलत:, कहक चाही, जतेक यश-प्रतिष्ठा-मानक ई अधिकारी छलाह, से समाज द्वारा नहि प्राप्त भेलनि ।किछु भेवो कयलनि तँ बहुत विलम्बसँ भेलनि, जीवनक अवसान-कालमे । तकर कारणो अछि ।

जीवन-कालमे कहियो मोहनजी खुलिकऽ आगाँ नहि अयलाह । जाहि सभ कारणेँ लगले लोक ख्याति पबैत अछि, ताहिसँ सदा दूरे रहलाह ।अपन गोल बनायब, अपन लोकसँ प्रशंसा करायब, अपनापर लेख लिखायब—प्रचारक एहि उत्थर प्रकारसँ हमर आशय नहिं अछि ।ई तँ निम्नतम माध्यम थिक जे प्रशंसायोग्य नहि कहल जा सकैछ, प्रतिभाशाली कविक लेल तँ किन्हुँ नहि । कविक शीघ्र ख्यातिक जे सहज माध्यम थिक—कविसम्मेलनक मंचसँ जनताकेँ आकृष्ट करब, नव-नव पोथी छपायब, समाजसँ जुड़ल रहब—ताहूमे सभ दिन ई अन्यमनस्के रहलाह । तकरो कारण अछि ।

हिनक जीवन-चक्र किछु ताहि दिशामे घुमैत रहलनि जे मिथिलाक भूमि आ समाजसँ साक्षात् दीर्घ सम्पर्क हिनका भऽ नहि सकलनि । एक तँ रहलाह ई सभ दिन बाहरे-बम्बै आ पटनामे, ताहूमे जीविका एहन नहि छलनि जाहिमे अवकाश बेसी भेटितनि; जीविकाक प्रकृतियो, मिथिला मिहिर अयबासँ पूर्व धरि, शुष्क-नीरस; स्वभावो अन्तर्मुखी—प्रचार-प्रसारसँ दूर, स्वाभिमानक पराकाष्ठा—कतहु कनियोँ झुकनिहार नहि, एक बेर युवावस्थेमे कोनो अप्रीतिकर घटना भऽ गेलनि कि कविसम्मेलनेकेँ बारि देलनि; आन भनहि हिनक शोषण कऽ लैत छलनि, ई ककरो लग मुँह खोलनिहार नहि; आर्थिक सिकस्तीक कारणेँ जीवनक सांध्य बेला धरि कोनो देखनुक काव्यसंग्रह नहि—तखन आरंभेमे कोना हिनक ख्याति पसरितनि ? कोना हिनक श्रेष्ठत्व सिद्ध होइतनि ?

हिनक फाँटमे जाहि मात्रामे 'प्रतिभा' पड़लनि, तकर दशांशो 'भाग्य' नहि । ख्याति लेल भाग्य चाही ।

'प्रतिभा'क मान मुदा होइत रहलनि । तत्कालीन प्राय: सभ पत्रिका हिनक कवितार्कें सादर प्रकाशित करनि आ सहृदय रसिककें ओ मुग्ध करैक । जे कोनो काव्य-संकलन छपैक, ताहिमे हिनक कविता स्थान पयबे करनि । इतिहासकार आ समीक्षक द्वारा अबडेरल नहि गेलाह । ई कहियो अज्ञात नहि रहलाह, गुमनाम नहि भेलाह । तखन, जनताक बीच अयबे नहि कयलाह जे जनताक कवि बनितथि, जेना 'मधुप' बनलाह, यात्री बनलाह ।

जनताक बीच लगातार नहियों आबिकऽ जनता कवि भेल जा सकैत अछि, जेना हिनक पूर्ववर्ती कविवर सीतारामझा छलाह, जे अपने रहलाह तँ सभ दिन काशीमे, हुनक कविता मिथिलाक गाम-गामक लोकक ठोरपर आबि गेलनि । तेना हिनका नहि भेलनि । तकरो पाछाँ कारण अछि ।

'कविवर' अपन कविताक विषयवस्तु बनौलनि तत्कालीन सामाजिक स्थितिकें, विषमताकें, देशदशाकें, शैली अपनौलनि व्यंग्यमूलक अथवा उपदेशक, भाषा पकड़लनि गाम-घरक, ठेठ । लोक जे अपन चारू कात देखैत छल, अनुभव करैत छल, स्वयं जे-जेना कहऽ चाहैत छल, से-तहिना कविवरक कवितामे ओ सुनलक । ओकरा भेलैक जेना ओकर मुँहक बात लोकि लेल गेल हो । कविवरक लोकप्रियताक मूल कारण यैह थिकनि । लोकप्रियातक रहस्यो यैह थिकैक ।

'मोहन' सेहो आरम्भमे किछु देशदशाक गीत रचलनि, लोकभाषामे शोषणक विरुद्ध स्वर उठौलनि, लोकप्रियो भेलनि, मुदा लगले ओहि बाटकें बदलि लेलनि । संस्कृत साहित्यक माजल विद्वान् छलाह । भरिसक भेल हेतनि, हलुका जयताह । अथवा, सामयिक समस्याकें परिवर्तनशील जानि प्रेम, अनुराग, प्रकृति आदि शाश्वत विषयकें चुनलनि आ उच्च कोटिक साहित्यिक गीतक रचनामे रमि गेलाह । गीतसभ उच्च मान-मूल्यक तँ भेलनि, मुदा जनजीवनमे घुलिमिलि नहि सकलनि ।

जनजीवनसँ तात्पर्य अछि सकल साधारण ओहन लोक जे साहित्यज्ञ नहियों अछि, साहित्यरसिको नहि अछि, केवल सरस भावक प्रेमी अछि, ललित शब्दक आबेसी अछि; ओकर मनोनुकूल पद वा पदखण्ड जँ कानमे पड़ैत छैक तँ तकरा ओ कंठक नीचाँ उतारि लैत अछि । 'मोहन'क आरंभिक पद, जाहिमे किछु 'फूलडाली' मे संचित छनि, तत्कालीन जनजीवनक कंठमे आबि गेल छलनि । किन्तु, ओहि प्रकारक पद-रचनामे आगाँ ई साहित्यिक पुट देबऽ लगलाह । फल भेल जे गीतसभमे कलात्मकता बढ़ैत गेल, साहित्यज्ञक हेतु ओ बेसी आकर्षक होइत गेल, मुदा जनताक ठोरपरसँ बिलाइत गेल ।

हिनक एहि परविर्तनक पाछाँ कारण की भऽ सकैछ ? एक तँ ई जे एहि प्रकारक पदक प्रसार लेल गायक-प्रचारक सेहो चाही, जे स्वयं कवियो भऽ सकैछ वा ओकर गीत गौनिहार अन्यो सुकंठ गायक । 'मोहन' गीतक सस्वर पाठ तँ कऽ लैत छलाह, खूब नीक जकाँ गाबि नहि सकैत छलाह । बादमे तँ कविसम्मेलन जयबोसँ परहेज कऽ लेलनि । दोसर क्यो एहन

अनुयायी, अपना विशेष काल बाहर रहलाक कारणेँ, भेटलनि नहि जे हिनक गीतकेँ गाबि-गाबि समाजमे प्रचार करितनि । एकर अतिरिक्त एक कारण आर ताकल जा सकैछ । से ई जे एहि प्रकारक गीतमे स्थायित्वक अभाव रहैछ, लगले-लागल पुरान भेल चल जाइछ । तेँ, इहो संभव थिक जे ई एहि प्रकारक क्षणस्थायी कविकर्मपर पुनर्विचार कयने होथि तथा चिरस्थायी काव्य-रचनाक निर्णय लेने होथि । जे हो, ई लोकगीतात्मक शैलीकेँ त्यागि साहित्यिक गीतरचना दिस प्रवृत्त भेलाह ।

साहित्यिक गीतक रचना हिनक निकट पूर्ववर्ती वा समकालीन अग्रज खाढ़ीक कविलोकनि सेहो करैत छलथिन, किन्तु हुनकालोकनिक ख्यातिक कारण गीत नहि छलनि । ता प्रबन्धकाव्यक युग आबि गेल छलैक आ श्रेष्ठ कविलोकनि ओहि दिस आकृष्ट भऽ चुकल छलाह । जे प्रबन्धकाव्यक भीड़ नहि गेलाह, से अगेयधर्मी छन्दोबद्ध मुक्तक लिखलनि । एतबा अवश्य जे किनको गेयधर्मी पदरचनासँ परहेज नहि छलनि ।

कविशेखर बदरीनाथझाक, जे हिनक शास्त्रगुरु छलथिन, ख्याति 'एकावली परिणय' लऽकऽ छलनि । कविवर सीतारामझाक ख्यातिक आधार भेलनि अगेयधर्मी मुक्तक, जकरा सुदृढ़ कयलकनि 'अम्बचरित' । छेदीझा 'द्विजवर', पुलकित लाल दास 'मधुर' प्रभृति श्रेष्ठ कविजनक प्रसिद्धिक कारण सेहो गीतेतरे काव्य रहनि । ई अवश्य जे उक्त सभ कवि आ ओहि खाढ़ीक आनो कविगण गीतोक रचना कयलनि, से नवीन परिपाटीक हो कि प्राचीन परिपाटीक हो । केवल यदुनाथझा 'यदुवर'क मुख्य आधार गेय काव्य रहलनि ।

आधुनिक युगकेँ गद्ययुग कहल जाइत अछि । 'मोहन' जहिया साहित्य-जगतमे प्रवेश कऽ रहल छलाह, गद्य निखरऽ लागल छल आ बहुशाखीय भऽ रहल छल । कथा, उपन्यास, नाटक, यात्रा, निबन्ध—सभ दिस जमीन तैयार भऽ गेल छलैक आ फसिल लगाओल जा रहल छलैक । म.म. उमेश मिश्र, बलदेव मिश्र, भोला लाल दास, गंगानन्द सिंह, रमानाथझा, हरिमोहनझा प्रभृति माजल गद्यलेखक मैथिलीक्षेत्रमे पदार्पण कऽ चुकल छलाह । दीर्घकालव्यापी समृद्ध काव्यक समकक्षता करबाक लेल पुनर्जन्म भेल गद्य खूब जोरसँ दौड़ लगा रहल छल । मुदा, काव्य सेहो ठमकल नहि छल, ओहो आगाँ बढ़िए रहल छल । ताहिमे एतेक अवश्य भेद भऽ गेलैक जे मैथिली काव्यमे आब गीत केन्द्रस्थानीय नहि रहल । 'मोहन'क उपरका खाढ़ीक जाहि किछु प्रमुख कविक उल्लेख भेल अछि, से एही तथ्यकेँ पुष्ट करैत अछि ।

किन्तु, हिनक समकालीनमे प्रतिभाशाली कविक एक दल आयल, जाहिमे किछु गोटेक ख्यातिक आधार निर्विवाद हुनक गीतरचना छल । एहन कविगणमे पहिल नाम काशीकान्त मिश्र 'मधुप'क अछि । 'मधुप' कविचूड़ामणि-उपाधि प्राप्त महाकवि छलाह जे काव्यक सभ शाखाकेँ झमटगर बनौलनि, मुदा हुनक ख्यातिक आधार भेलनि गीते, से दुनू प्रकारक लोकगीत शैलीक सेहो आ साहित्यिक गीत सेहो । एहि कड़ीमे दोसर कवि छथि ईशनाथझा । ओ सरस कवि रहथि आ हुनक सरसता प्रकट होइनि गीतेक माध्यमसँ । मैथिली महाभारतकेँ छोड़ि, हुनक प्राय: सकल काव्य गीतात्मके अछि । आरसी प्रसाद सिंह हिन्दीमे

प्रबन्धकाव्य सेहो लिखलनि, मुदा मैथिलीक भण्डारकेँ गीत आ मुक्तकेसँ भरलनि । ताहूमे, ख्यातिक आधारभूमि अपन प्रथमहि गीतकाव्य 'शेफालिका' सँ तैयार कयलनि ।

ओहि खाढ़ीक किछु आर विख्यात कविमे यात्री, सुमन, भुवन, किरण, तंत्रनाथझा ओ जीवनाथझा छथि, जनिकालोकनिक ख्याति हुनक गीतक कारणेँ तँ नहि भेलनि, किन्तु एहिमे एहन क्यो नहि छथि जे उत्कृष्ट साहित्यिक गीतक रचना नहि कयने छथि । हुनकालोकनिक महत्त्वक जखन कारण ताकल जाइछ तँ ताहिमे एक प्रमुख तत्त्व हुनक गीतरचना सेहो रहैछ ।

अपन समकालीन कविनक्षत्रक प्रभामण्डलक बीच 'मोहन' सेहो चमकऽ लगलाह । मान्यता लगले भेटि गेलनि, तकर मुख्य कारण मुजफ्फरपुरक प्रवास भेलनि । शास्त्री-आचार्य करबा लेल ई तत्रस्थ धर्मसमाज संस्कृत कालेजमे प्रविष्ट भेलाह । ओहि समय साहित्यक अध्यापक रहथि कविशेखर बदरीनाथझा । हुनक शिष्यमण्डलीमे रहथिन सुरेन्द्रझा 'सुमन' आ काशीकान्त मिश्र 'मधुप' । हिनकामे कवित्वशक्ति तँ विद्यमान रहबे करनि, ताहिपर महान् साहित्यिक गुरु तथा उदीयमान प्रतिभावान वरिष्ठ सहपाठीक सान्निध्य-लाभ पाबि, अनुकूल वातावरणमे, आर विकसित होइत गेलनि । कालेजसँ बाहरो, मुजफ्फरपुरमे हिनका भुवनेश्वरसिंह 'भुवन' आ आरसी प्रसाद सिंहसँ घनिष्ठ मित्रता भेलनि । फलत: हिनक आरम्भिक सर्जना ओहि मित्रमण्डलीसँ समुचित प्रोत्साहन आ प्रशंसा पाबि वेगवान भऽ उठलनि ।

साहित्यमे 'मोहन'क पदार्पण तीस इसवीक आसपास भेलनि । तहियासँ जीवनक अन्तिम पहर धरि, १९८० क लगभग मध्य धरि, ई लेखनरत रहलाह । एतावता, हिनक साहित्यिक जीवनक अवधि मोटामोटी पचास वर्षक छलनि ।

ओहि पचास वर्षमे देशक राजनीतिक सामाजिक पटलपर पर्याप्त परिवर्तन भेलैक । हिनक प्रवेश-कालमे देश स्वाधीनता-संग्राममे जूझल छल, सगरो गांधीक 'आंधी' बहैत छलैक । एक दिस स्वदेशी आन्दोलन तँ दोसर दिस अंगरेजक दमन दुनू पराकाष्ठापर छलैक । देश अन्तत: स्वाधीन भेल । गांधीक निर्मम हत्या भेलनि । तीन-तीन बेर भारत पर युद्ध लादल गेलैक । महगी आकाश छूबऽ लागल । राजनीतिपर भोगिनीति हाबी भेल । भ्रष्टाचार संक्रामक रोग जकाँ सभतरि पसरि गेल । भौतिक समृद्धिक पाछाँ लोक दौड़ऽ लागल । आध्यात्मिक सांस्कृतिक चेतना शिथिल होबऽ लगलैक । अंगरेजी शिक्षाक विस्तार भेलैक । दलित-शोषित वर्गमे जागरण अयलैक । औद्योगिक संस्कृतिक विकास भेलैक । लोक नगरोन्मुख होबऽ लागल । कांग्रेसी सत्ताकेँ प्रबल चुनौती भेटलैक । राजनीतिक आ सामाजिक परिदृश्य लगले-लागल बदलऽ लगलैक ।

ओहि पचास वर्षमे मिथिलो जेना छल तेना नहि रहल । देशक परिवर्तनक हवा एतहु बहलैक । मुदा, आन ठाम बिहाड़ि छलैक तँ एतऽ सिहकी । असरि एतऽ कमसम पड़लैक । तेँ, राजनीतिक दृष्टिएँ ई क्षेत्र उपेक्षित रहल । ई अपन उचित हिस्सा नहि पाबि सकल । परिवहन, उद्योग, बिजली, सड़क, शिक्षा आ कृषि-सुविधाक जतऽ आन क्षेत्रमे वर्षा

भऽ रहल छलैक, ततऽ मिथिला मे कतहु बुन्दपात देखबामे अबैत छल, कतहु सेहो नहि । एहि ठामक भाषाकें दबा देल गेल । किन्तु, ताहि लेल एहि ठामक लोकमे कोनो ओलोड़न नहि भेल । शिक्षाक विस्तार तँ भेल, मुदा धूरी बदलि गेल । संस्कृतक ह्रास भेल, अंगेरजी ज़ोर पकड़लक । मैथिली शिक्षाक सोपानपर चढ़ल । बिहारक विश्वविद्यालय सभमे मैथिली प्रवेश कयलक । तथापि, सभसँ विस्मयकारी घटना ई भेल जे एहि ठामक पढ़ल-लिखल अभिसंख्य मैथिल लोकमानसमे अपन मातृभाषाक प्रति उपेक्षाभाव पसरि गेल । उत्तर कालमे महानगरक मैथिल समाजमे मातृभाषाक प्रति सम्मान-भाव जागल, ओसभ उद्बोधनक शंख फूकल, मुदा मिथिलामे ओकर ध्वनि जेना पहुँचल नहि, पहुँचबो कयल तँ ताहिसँ लोक, जेना चाही, जागिकऽ उठल नहि ।

ओहि पचास वर्षमे मैथिली साहित्यो बहुत दूरक यात्रा तय कयलक । पचासो पत्रिका उगल, डुबल । सैकड़ो साहित्यकारक पदार्पण भेल । हजारसँ ऊपर पोथी छपल । अनुवादक माध्यमे आनो भाषाक साहित्य आयल । अखिल भारतीय मैथिली साहित्य परिषदक जन्म भेल, जमि गेल आ फेर उखड़ि-सन गेल । केन्द्रीय साहित्य अकादेमीमे मैथिली स्थान पौलक । समयक धारमे साहित्य बहि चलल । सभ विधामे अपेक्षित निखार आयल । काव्य तँ सर्वाधिक समृद्ध भेल । नवसँ नव शिल्प, टटकासँ टटका कथ्य, उत्तमसँ उत्तम काव्यबोध दृष्टिगत भेल । कतहु प्राचीनो, कतहु नवीनो तँ कतहु प्राचीनक नवीनीकरणमे मैथिली काव्यधाराक गाम्भीर्य आ विस्तार बढ़ैत गेल आ ओ निरन्तर अधिक वेगवान होइत गेल ।

ओहि पचास वर्षक समय, लोक आ साहित्यक प्रभाव 'मोहन' पर पड़ब अवश्यंभावी छल । से पड़ल आ तकरे प्रतिफल थिक हिनक काव्य । मैथिलीक वीणापर ओहि पचास वर्षमे जे काव्य झंकृत भेल, ताहिमे गनल-गुथल अधिक निखरल मुखर ध्वनिमे एक कविवर मोहनोक छनि ।

व्यक्तित्व-रचना

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'क जन्म दरभंगा नगरसँ सटले पश्चिम वाग्मती नदीक तटपर अवस्थित एक छोटछीन गाम पुरुषोत्तमपुरमे भेल छलनि । पुरुषोत्तमपुर आब चतरिया नामसँ प्रसिद्ध अछि । ई थिक तँ देहात, मुदा जँ वाग्मती बीचमे बाट नहि काटि देने रहितैक तँ जेना नगरक पसार भऽ रहल छैक, एखन धरि ई दरभंगाक एक मोहल्लाक रूपमे परिवर्तित भऽ गेल रहैत । आमक गाछीसँ ई गाम चारू दिससँ बेढ़ल अछि, जाहिसँ ग्राम्य छटा वाह्यत: सुरक्षित लगैछ, मुदा नगरक बसातकेँ ओतऽ पहुँचबासँ ओ बहुत रोकि नहि सकल । तँ, चतरिया नगर लग रहितो नगरक हिस्सा नहि थिक एवं गाम रहितो एकरा बज्र देहातो नहि कहब । गाम आ नगरक समन्वयनकेँ रेखांकित करब एहि लेल आवश्यक अछि जे ई वातावरण 'मोहन'क व्यक्तित्व-निर्माणमे प्रभावी भूमिकाक निर्वहन कयलक । हिनक शिष्टता, शुद्धता, आडम्बरहीनताक गुण ग्राम्य परिवेशक देन छल तँ वाल्यावस्थेसँ अर्थ-संचयक उद्योग, यात्राक ललक, स्वालंवनक चेष्टा नगरीय वातावरणक प्रभाव छल । नगरक कात लग वास रहबाक प्रसंग अयलापर एक बेर अपनहिँ हमरा कहने छलाह जे छात्रावस्थामे तत्कालीन निविष्ट कुलीन पण्डितवर्ग हिनका 'सड़कक कातक ब्राह्मण' बुझि कनेमने उपेक्षा करैत छलथिन, जेहन हिनक बुद्धि-ज्ञान छलनि, हृदयमे तेहन स्थान नहि दैत छलथिन । हम हँसिकऽ पुछने रहियनि - 'की द्रोण जकाँ ?'

'नहि-नहि, ने ओ द्रोण रहथि आ ने हम कर्ण रही । भेद एतबे रहय जते राजकुमार आ हुनक अनुचर सखाक बीच रहैत छैक ।' ओ मुस्कुराइत उत्तर देने रहथि ।

उच्च कोटिक शास्त्रज्ञानक अछैतो, साहित्याचार्यक प्रथम श्रेणीक उपाधि रहितो, शिष्टता शालीनता वाक्पटुता रखितो, ताहि जमानामे कोनो उच्च विद्यालयमे संस्कृत-पण्डितक जीविका हिनका नहि भेटि सकलनि, जे हिनका सन योग्यताधारीक लेल तहिया कोनो कठिन नहि रहैक, तँ तकर टीस हिनका जीवन भरि रहलनि; कहलनि तँ नहि, मुदा भऽ सकैछ, तकर कारण ई अपनाकेँ 'सड़कक कातक ब्राह्मण' होयब सेहो बुझैत रहल होथि ।

हिनक वृद्धप्रपितामह दुर्गादत्त ठाकुर बासोपट्टी (मधुबनी जिला) सँ आबि चतरियामे बसल रहथिन । प्रपितामह काशीनाथ ठाकुर, पितामह जनार्दन ठाकुर एवं पिता सदानन्द ठाकुर सभ संस्कृतक पण्डित रहथिन । गृहस्थीक अतिरिक्त पण्डिताइ सेहो चलनि । पिता वैदिक कहबथिन - वेदशास्त्रक विद्वान् रहथिन । ओ काश्यप गोत्रीय मरँगढ़ मूलक नैष्ठिक

सद्ब्राह्मण रहथिन, जनिका भूसम्पत्ति बड़ थोड़ रहनि, गामक बाहर कतहु जीविको नहि रहनि, वैदिकीसँ गुजर जोग आय भऽ नहि पबनि, तँ बराबरि सिकस्ती रहलनि । ओ युगे तेहन समटल छलैक, लोकक आवश्यकते ततेक सीमित छलैक जे कमो आयमे, पूजा-पाठ करैत, गप्प-सड़क्का करैत, शतरंज-चौपड़ि खेलाइत, सौमनस्यसँ लोक जीवन बिता लैत छल । उपेन्द्र ठाकुरक जन्म ओही वातावरणमे भेलनि ।

जन्म कहिया भेलनि, ई कहब कठिन अछि । ब्राह्मण-परिवारमे नवजात शिशुक टीपनि बनयबाक प्रथा पुरान छैक । ताहूमे जाहि प्रकारक हिनक पण्डितक घर छलनि, ताहिमे हिनक टीपनि अवश्य बनल होयतनि । मुदा, ई कहियो ओकरा लोक लग खोललनि नहि । तँ, निश्चित जन्मतिथि बूझब आब असंभव अछि । इतिहासग्रन्थमे जे लिखल छैक आ अपनहुँ कहैत छलथिन, से थिक १९१३ इसबी । को मास, कोन तारिख, से ज्ञात नहि । हिनक एक दोसरो जन्मतिथि भेटैत अछि जे जीविकाक निमित्त लिखाओल गेल छल । ओ थिक २४ नवम्बर १९१६ इसबी । यैह तिथि साहित्य अकादेमीक 'हूज हू ऑफ इंडियन राइटर्स—१९८३' मे सेहो अंकित छनि ।

एक सिकस्त नैष्ठिक पण्डित ब्राह्मण-परिवारक नेनाक बाल्यकाल जेहन बितबाक चाही, तेहने हिनको बितलनि । ताहूमे पाँचमे वर्षक अवस्थामे मातृसुखसँ वंचित भऽ गेलाह । मइटूगर नेना अन्तर्मुखी भऽ जाइछ । से इहो छलाह । वाल्यावस्थेमे सदाचारक पाठ पढ़ाओल गेलनि, आस्तिक संस्कार भरल गेलनि ।

जखन विद्यालय जयबाक वयस भेलनि तँ हिनक मेधा-प्रतिभा उजागर होबऽ लगलनि । तीक्ष्ण बुद्धि आ कारयित्री क्षमता हिनक गुरुवर्गकेँ आकृष्ट कयलक । पिता पण्डित रहबे करथिन, अपनहि पढ़बथिन । 'मोहन' अपन पिताकेँ 'बाजि उठल मुरली'क समर्पण-पृष्ठमे 'प्रथम गुरु' कहने छथि । ओ प्रथम गुरु हिनका जे प्रथम शिक्षा देलथिन से अद्भुत छल । लोक जे जीवनक चारिम पहरमे पढ़ैत अछि, से हिनका नेनेमे रटा देलथिन । लघुकौमुदीक संग गीताक श्लोक सेहो हिनका कंठ कराओल जाइनि । गीताक श्लोक रटयबाक पाछाँ हुनक इच्छा रहनि जे वेदव्यास-रचित मंत्ररूप शब्दमे जे शक्ति छैक से हिनकामे आत्मसात होउन ।

शब्दशक्ति तँ हिनकामे आत्मसात भेवे कयलनि, गीताक कर्मयोग ओ वैराग्य सेहो हिनकापर अपन रंग चढ़ा देलकनि । एहि प्रसंगकेँ मन पाड़ैत 'मोहन' स्वयं लिखने छथि जे हिनक पिताकेँ 'क्यो प्रश्न कयलकनि—औ वैदिक, पढ़तह पूत चण्डी, तखन चढ़तह हंडी-से दुर्गापाठ ने पहिने सिखबितिऐक, तत्त्वज्ञान-पोथी तँ बयस ढरलैपर ने उपयोगी ? बाबू कहने रहथिन-पहिने ज्ञान, तखन आन जहान । परमार्थ-बोध व्यवहार पहिने चाही, स्वार्थ-बोध-व्यवहार पाछाँ ।'

से, जीवन भरि बिना फलक चिन्ता कयने ई कर्म करैत रहलाह । कर्मक अनुरूप फल नहि प्राप्त भेलनि तँ तकरा दैवइच्छा बूझि शिरोधार्य कयलनि । ताहि लेल विचलित नहि भेलाह, टुटलाह नहि, आ कर्तव्यसँ मुँह नहि मोड़लनि, गाण्डीव नहि पटकलनि । हिनक

व्यक्तित्व मे गीताक ई गुण समा गेलनि, तकरा 'मोहन' एहि शब्दमे स्वीकार कयने छथि—'सत्ते, होसगर भेलापर से मर्म बुझि सकलिऐक । आत्मद्दीपन जँ उद्धारक बाट तँ अर्थचिन्तन देहक सत्कार । गीताक जतबे-जे अर्थ हृदयंगम कऽ सकल छी, लाभ अवश्य भेल अछि मुदा ज्ञान दूरे । मोह कहाँ छोड़ि रहल अछि ? नष्टो मोह: स्मृति: लब्धा-कहबाक स्थिति धरि लागले रहब—हरि से लगा रहो रे भाई, बनत-बनत बनि जाई । 'अनेक जन्म संसिद्धि:' वला आलोक समक्ष । गीतासँ परमार्थ चैतन्य कि आन सद्गुण जे भेल होअय, अपन गोटी सुतारबाक प्रौढ़ि टा नहिए भेल । शान्तिप्रिय, तेँ ।'

अपन शान्तिप्रियताकेँ बालमनपर पड़ल गीताक संस्कार ई मानने छथि, जे हिनक व्यक्तित्वक अभिन्न अंग बनि गेलनि ।

'चढ़तह हंडी'-अर्थात् बुतातक उपाय तँ दुर्गेसँ संभव छल । से सहज संभव छल ताहि दिन । विजयादशमी वा आनो अवसरपर, देवीस्थानमे वा अपनहुँ ओहि ठाम, जागीरदार जमीनदार सेठ-साहुकार तँ सहजहिँ जे सामान्यो वित्तक लोक पण्डितमण्डली द्वारा पुरश्चरण करबैत छल । एहिसँ बहुतो गरीब ब्राह्मणकेँ भोजन आ दक्षिणाक लाभ भऽ जाइत छलनि । कमो पढ़ल-लिखल गरीब ब्राह्मण, जे दुर्गापाठ करब सीखि लेने छलाह, सालमे किछु-ने-किछु कमा लैते छलाह । हुनका लेल दुर्गा सद्य: दुर्गतिनाशिनी छलीह ।

उपेन्द्र ठाकुर प्रथमा पास कऽ मध्यमा कक्षामे दरभंगाक जनार्दन संस्कृत पाठशालामे नाम लिखा लेने छलाह । नाम तँ लिखा गेल रहनि, मुदा पाठ्यपुस्तकं नहि जुमलनि । पिताक से स्थिति नहि जे हिनका पोथी कीनिकऽ दितथिन । तखन ई दुर्गाक शरणमे गेलाह आ ओ सहायक भेलथिन । कोना, से हिनके शब्दमे देखल जाय — ''तहिया राज दरभंगामे दुर्गापाठ चलैक कंकाली मन्दिरपर आ मण्डलान्तक करीबमे तकर परीक्षा होइक हरिमन्दिरपर रामबागमे । गामक किछु बूढ़ ललकारा देलनि — हौ जाह ने, परीक्षा दैह ने । जँ भऽ जयतह तँ अपन कमाइसँ सभ पाठ्यपुस्तक किना जयतह । बाप कहिया ने गीता-दुर्गा रटा देलथुन, दुर्गाकि लाभ लैह । से जोश चढ़ि गेल, बाबूक बिना जनतबेकेँ हम कौतूहलवश परीक्षार्थ गेलहुँ । नाम पुकार भेल तँ उठलापर परीक्षक पण्डित-मण्डली हँसि देलक आ बाजल जे 'बड़ बड़ भासल जाय..... । हम हठ कऽ निकट जाकऽ बैसि रहलिऐक — हमरा पोथी नहि छल, व्यग्र छलहुँ । षट्शास्त्री स्व० पंडित रविनाथझा बजलाह—बटुक ठठवह नहि, छोड़ह । हम निर्भीक भऽ कहलियनि — कृपया हमर मोहभंग कऽ देल जाय, हारि मानि लेव । आन पण्डितसभ कहलथिन—मुँहचुरू कऽ विदा कयनहि ई मानत । पढ़ह । तकरा बाद दस मिनट धरि विभिन्न ठाम पोथी उनटबाकऽ पढ़ाओल गेल मुदा अशुद्ध कतहु हमरा होयबे ने करय । क्यो पण्डित कहलथिन — आब की करबैक ? महाराज एहन छोट नेनाक समावेश वर्जित कयने छथिन । मुदा स्व. पट्शास्त्रीजी अड़ि-तनि गेलथिन, कहलथिन हम महाराजकेँ मना लेव । तहियासँ शास्त्रीमे पढ़बा काल धरि पोथिये लेब नहि, मुजफ्फरपुरमे संस्कृत कालेजक छात्रावासक खर्च चलयबो लेल दुर्गाक आश्रय लैत रहलहुँ । धन्य दुर्गा से त्राण होइत रहल । सत्ते, 'दुर्गा दुर्गति नाशिनी ।''

एहि एक घटनासँ हिनक व्यक्तित्वक अनेक पक्ष उद्घाटित होइत अछि । हिनक आत्मविश्वास, स्वावलंबन, निर्भीकता, प्रतिकूल परिस्थितियोमे डटल रहबाक क्षमता, अध्ययन जारी रखबाक आतुरता तथा ईश्वरपर अटूट आस्था—ई सभ गुण, जे बादमे हिनक व्यक्तित्वकेँ चमकौलक, अपन झलक एके क्षणमे देखा देलक ।

दुर्गाक आश्रय तहिया जे ई ग्रहण कयलनि से कहियो छोड़लनि नहि । संकटक अनेक घड़ीमे, ई स्वीकार कयने छथि, दुर्गापाठसँ शक्ति आ प्रेरणा पौने छलाह ।

साहित्य दिस ललक हिनका बाल्यकालेमे भऽ गेलनि । जखन प्रथमे मे रहथि तखनो पाठ्यपुस्तकसँ अधिक मन कविता-कथा-नाटक-उपन्यास पढ़बामे रमनि । संस्कृतक किछु विख्यात काव्यग्रन्थ यथा अभिज्ञान शाकुन्तलम्, उत्तररामचरितम्, श्रीहर्षचरितम् प्रभृति अनुवादक सहायतासँ रस लऽ लऽ कऽ पढ़ल करथि ।

कवित्व प्रतिभा हिनकामे सहजात छलनि, जे दस-बारह वर्षक वयसमे प्रकट होबऽ लगलनि । ई स्वयं कहैत छथि—'छोटे वयसमे सर्जनात्मक प्रतिभो हुलकऽ लागल—पहिने संस्कृत, फेर हिन्दी आ बादमे मैथिली धरायल । काव्यक्षेत्रमे ई तीन गोटेकेँ अपन प्रेरणास्रोत मानने छथि । पहिल रघुनाथझा, दोसर हरिनारायणमिश्र आ सर्वाधिक उत्प्रेरक भेलथिन पं. सुरेन्द्रझा 'सुमन' ।

अपन उपनाम 'मोहन' ई कहिया रखलनि आ कोन कारणे रखलनि से तँ ज्ञात नहि, मुदा काव्ययात्राक प्रथमे-द्वितीय सोपानपर ई अपन उपनाम 'मोहन' रखने होयताह । घनश्याम सुन्दर हिनको स्वरूप छले, काव्यरसिक छलाहे, प्रेम-अनुरागसँ भरल तरुण हृदय रहबे करनि, आम्रकुंजक मादक वातावरणसँ झूमैत रहल होयताहे, तँ कोनो प्रेम-पाँती जोड़ैत काल अनायास अपनाकेँ 'मोहन' बना लेने होथि तँ कोनो आश्चर्य नहि ।

शुरूमे मैथिलीमे स्तुति आ शृंगारपरक पद जोड़थि, संस्कृतमे श्लोक गढ़थि आ हिन्दीमे गीत-कविता रचथि । तीनू भाषामे हिनक काव्य-सरस्वती प्रवाहित होबऽ लगलीह । आरंभिक संघर्षक क्षणमे हिन्दीक प्रशस्ति-कविता हिनका आगाँ बढ़बाक हेतु सोपान सिद्ध भेलनि तँ संस्कृत काव्य योगक्षेममे प्रत्यक्ष-परोक्ष सहायक भेलनि । मैथिली काव्य यश-प्रतिष्ठा मान-सम्मान देलकनि । पटनामे स्थिर भऽ गेलापर हिन्दी कविता-रचना चल गेलनि, संस्कृत बनल रहलनि, मैथिली बढ़ल-चढ़ल गेलनि ।

ई जखन मध्यमामे छलाह, ओही बीचमे सत्रह वर्षक अवस्थामे हिनक विवाह भऽ गेलनि गहुमी, जे हिनक गामसँ सटले छनि । जयकान्तझा हिनक स्वसुर छलथिन । पत्नीक नाम थिकनि चन्द्रकला देवी । हिनक पत्नी दू बहिन मात्र । सारि बालविधवा भऽ गेलथिन, जनिका ई अपने आश्रममे पछाति राखि लेलथिन । कालान्तरेँ हिनका तीन सन्तान भेलथिन, पहिल तेसर कन्या, दोसर बालक । नागेन्द्र ठाकुर बालकक नाम थिकनि तथा भवानी आ जयन्ती कन्या थिकथिन ।

पनिचोभक पं. नन्दलालझाक शिष्यत्वमे ई प्रथम श्रेणीमे मध्यमा कयलनि । अध्ययनक क्रम टुटि गेलनि । ओकरा फेर ई जोड़लनि आ सिकस्तीक अछैतो मुजफ्फरपुरक विख्यात

धर्मसमाज संस्कृत कालेजमे साहित्यक शास्त्री वर्गमे नाम लिखा लेलनि । अध्यापक रहथि कविशेखर आचार्य बदरीनाथझा । पाठ्यग्रन्थक अभावकेँ किछु दुर्गापाठक आयसँ दूर करथि, किछु संगी-साथीसँ माङिकऽ, किछु पुस्तकालयसँ लऽ कऽ । एहू स्थितिमे १९३५ मे शास्त्री आ १९३७ मे आचार्य दुनू परीक्षामे ई प्रथम श्रेणी प्राप्त कयलनि । व्युत्पत्ति प्रतिभाक कारणेँ गुरुजनक विशेष स्नेहभाजन बनलाह एवं सहपाठी वर्गक बीच प्रिय भेलाह ।

विधिवत् शिक्षा एतहि विराम लऽ लेलकनि । ई कृतविद्य भऽ चुकल छलाह । प्रथम श्रेणीक साहित्याचार्य कोनो संस्कृत विद्यालयक अध्यापक-पद लेल अथवा हाइस्कूलक हेडपंडितक पद लेल वांछित योग्यतासँ विशेषे छलैक । मुदा, विशेष योग्यता राखियोकऽ, अनेक प्रयास कयलो उत्तर, 'मोहन' केँ ई पद नहिएँ प्राप्त भऽ सकलनि ।

पितो चाहैत छलथिन, अपनो चाहैत छलाह जे कोनो हाइस्कूलक हेडपंडित बनि शान्तिसँ गुजर-बसर करैत 'काव्यशास्त्र विनोदेन' समय बितबथि । जखन ओहिमे विफल रहलाह तँ जीवन-संघर्षक महासमरभूमिमे कुदबा लेल विवश भेलाह । एक तँ चाकरी नहि पयबाक विफलता, दोसर घरक जर्जर स्थिति, ताहिपर परिवार आ समाज द्वारा निरन्तर कौचर्य । फलत: ई गाम छोड़बाक निश्चय कयलनि । नेपाल गेलाह । ओतऽ जानकी-निवासमे तीन-चारि मास संस्कृतक खानगी शिक्षक रहलाह । फेर गाम आबि गेलाह । एहि बेर दूर जयबाक निर्णय लेलनि । अपन ओहि कालक संघर्षकेँ मन पाड़ैत, हिनका जे क्यो जाहि रूपमे सहायक भेलथिन, ताहि सभ बन्धुक ई कृतज्ञतापूर्वक स्मरण कयने छथि ।

हिनका लग पूजीमे पूजी छलनि संस्कृत साहित्यक ज्ञान आ काव्य-प्रतिभा । वैह पूजी लऽकऽ घर-द्वारकेँ छोड़ि ई नौकरीक उदेसमे चललाह । काशी जयबाक निश्चय कयलनि, बड़ौदाक राजकीय सम्मान परीक्षामे सफल भेलापर किछु लाभक सूचना भेटल छलनि । सुमंनजी काशी धरिक बटखर्चा देलथिन तथा काशीनाथ ठाकुर 'कलेश'क नांमसँ चिट्ठी । काशीमे कलेशजी एक साँझ भोजन करा देथिन, दोसर साँझक व्यवस्था कांचीनाथझा 'किरण'क उद्योगसँ भेलनि । ओ बड़ौदा जयबा लेल किरायो पुरा देलथिन । काव्यप्रतिभो सहायक भेलनि—काशीनरेश आ महारानी लक्ष्मीवतीक अभिनन्दनसँ किछु द्रव्य भेटलनि । बड़ौदामे १९३८ क साहित्य-रत्नक परीक्षामे सफल भऽ सार्टिफिकेट आ द्रव्य प्राप्त कयलनि । पाइ गाम पठा अपने बम्बै प्रस्थान कयलनि । बम्बैक यात्रा खण्ड-खण्डमे भेलनि । कतहु संस्कृतक ज्ञान, कतहु काव्य-प्रतिभा, कतहु अपेक्षितारय काज देलकनि आ ई बम्बै पहुँचलाह ।

बम्बै मे पं० श्यामानन्दझा हिनका बड़का आश्रयदाता भेटलथिन । ओ ओहि ठाम जे.बी.एम. संस्कृत कालेजक प्राचार्य रहथि । ओ हिनका ने केवल अपना ओहि ठाम रखलथिन, अपितु खास तत्परतासँ अनेको ठाम जीविकाक व्योँत धरौलथिन । ततबे नहि, अपन कीमती पोशाक देलथिन, बम्बैमे सफल बनबाक लेल चरफरी सिखौलथिन । हुनके उद्योगसँ पहिने ई पुरश्चरण, फेर ट्यूशन आ अन्तमे वैंकटेश्वर स्टीम प्रेसमे संस्कृत-संशोधकक जीविका पौलनि । श्यामानन्द बाबूक उपकारसँ ई आजीवन अभिभूत रहलाह । ई एहि तरहेँ हुनक

स्मरण कयने छथि—'श्यामानन्द बाबू आइ नहि छथि, मुदा हमर रोम-रोम हुनक स्नेह-दयाक प्रति कृतज्ञ अछि ।'

बैंकटेश्वर स्टीम प्रेस तँ बादमे छुटि गेलनि, मुदा प्रूफ-संशोधन कपारमे सटि गेलनि । ई प्रेसजीवी भऽ गेलाह ।

डेढ़ वर्ष धरि प्रेसमे काज कऽ, छुट्टी लऽ ई गाम चल अयलाह । एतऽ पिताक देहान्त भऽ गेलनि । छुट्टी बीति गेलापर ई गेलाह नहि । लागल नौकरी छुटि गेलनि । फेर बेकारी ।

सुमनजीक प्रति सेहो ई अतिशय कृतज्ञ रहलाह । लिखने छथि—'सुमनजीसँ हमरा नीक लग्न-नक्षत्रमे भेँट, ओ सदा हमर योगक्षेम चाहलनि ।' पटनाकेँ ई ठऽर बनौलनि । ओतऽ ग्रन्थमाला कार्यालयमे छौ मास काज कयलनि । एम्हर, आर्यावर्त (हिन्दी दैनिक, पटना) क प्रकाशन विचाराधीन छलैक । सुमनजीक सघन चेष्टासँ कुमार गंगानन्द सिंह आ दिनेशदत्त झाक अनुशंसापर ई आर्यावर्तक प्रूफ संशोधन विभागमे, १९४१ मे, आबि गेलाह । असालतन नियुक्तिपत्र एक-डेढ़ वर्षक बाद भेटलनि । ओहि विभागमे आठ वर्ष रहलाक बाद 'जॉब' मे स्थानान्तरण भेलनि । १९६० मे ओही संस्थानसँ मैथिली साप्ताहिक 'मिथिला मिहिर'क प्रकाशन आरंभ भेलापर, हिनका ओकर उपसम्पादक बनाओल गेलनि । बादमे ओकर सहायक सम्पादक-पदपर प्रोन्नत भेलाह, जतऽसँ २४ नवम्बर १९७६ कँ अवकाश ग्रहण कयलनि ।

पटनाक पैंतिस-छत्तिस-वर्षक प्रवासक अवधिमे आर्यावर्तमे अयलाक बाद ई कतहु आन ठाम नौकरी तँ नहि कयलनि, किन्तु हिनक संस्कृत काव्य-रचना-कौशल बैसल नहि रहलनि । ओकर यश मुदा हिनक भाग्यमे नहि छलनि । दोसर प्रयोजन जे कहल गेल छैक, से धरि भेलनि, जतबे-ततबे ।

ओहि बीच हिनक स्वास्थ्य खसि पड़लनि । मधुमेहसँ पीड़ित पूर्वेसँ छलाह । आँखिक ज्योति कम भऽ गेलनि । अवकाश-प्राप्तिक बाद किछु दिन पटनामे अपन पुत्र-पुत्रीक डेरापर, किछु दिन गाममे रहलाह । ताहि दिन दरभंगामे सुमनजीक प्रेससँ मैथिलीमे पत्र वा पत्रिका प्रकाशनक परिकल्पना भऽ रहल छलैक, ताहिमे मनोयोगसँ रुचि लेबा लेल अपनाकेँ तैयार करिते छलाह कि देह खसि पड़लनि । किछु दिन शय्यागत रहलाह आ २४ मइ १९८० कँ दरभंगा अस्पतालमे महाप्रयाण कयलनि ।

हिनक जीवन-गाड़ी प्रशस्त सड़कपर चलनिहार सवारी जकाँ दौड़ैत अपन लक्ष्य धरि नहि पहुँचल छलनि, अपितु नदी पहाड़ जंगलसँ पाटल मार्गकेँ स्वयं ठीक-ठाक करैत, टपैत, रुकैत, आगाँ ससरैत अन्तिम पड़ावपर आयल छलनि । जीवनक अनुभवमे कटु अधिक छलनि, मधु कम । छल-प्रपंच रहित शान्तिप्रिय स्वभाव छलनि, किन्तु जीविका एहन भेटलनि जतऽ कान निरन्तर प्रेसक हड़हड़ ध्वनि सुनबा लेल विवश रहनि, आँखि आनक

अशुद्ध मुद्रण कैं शुद्ध करबामे, खुद्दी बिछबामे, गड़ल रहनि । एहनामे अधिक गोटेक दिमाग स्वस्थ शीतल शान्त विचार-विवेकशील सर्जनरत रहब कठिन छैक । मुदा, 'मोहन'कैं प्रेसक अशान्त वातावरण दिमागक शान्तिकैं बाधित नहि कऽ सकलनि, हिनक सर्जन-क्षमताकैं ओहिसँ क्षति नहि भेलैक । ओहनो वातावरणमे ई बराबरि लिखैत देखल जाइत रहलाह । एहन कतिपय क्षण अबैत छलैक जखन नीचाँमे श्रमिक समुदाय नारा बुलन्द करैत रहैत छल, ऊपरमे टेबुलपर निर्बाध्र ई लिखैत रहैत छलाह । कखनो ई लिखबामे तल्लीन रहैत छलाह कि प्रूफक दू-तीन टा गेली हिनक आगाँमे आबि जाइत छलनि । ई ठामहि पैडकैं घुसका, प्रूफ देखऽ लागथि । भऽ जाइनि कि ओकरा कात कऽ फेर पैड अपना लग लऽ लेथि आ लिखबामे तल्लीन भऽ जाथि, पूर्ववत् । जतबा लिखने रहथि ताहिसँ आगाँ लगले कलम ससरऽ लगनि, कड़ी जेना टुटनि नहि ।

कार्यालय निर्धारिते समयसँ आबथि । छड़ी राखि पाँच मिनट सुस्ताथि । प्रूफ आयल रहनि तँ से पढ़थि, ने तँ अखबार उठा लेथि । ज्योति कम भऽ गेल छलनि, तँ आँखि लग बेसी सटबऽ पड़नि । फेर अखबार राखि, टेबुलपर झुकि, कोनो टटका समाचारपर टिप्पणी लिखब शुरू कऽ देथि । से, प्राय: दू-तीन टा टिप्पणी रोज लिखथि । आवश्यकतानुसार किछु मिथिला मिहिरक विभिन्न स्तम्भ लेल मुद्रणार्थ नीचाँ पठा देथि, किछु ओहिना लिखले रहि जाइनि जे बादमे नष्ट भऽ जाइनि । मिथिला मिहिर मे एक गोटेक लिखल जतेक हिनक छपल छनि, से दोसर ककरो नहि, किन्तु अपन नामसँ केवल ई कविता छपबथि । ई अनेक छद्मनाम रखने रहथि जाहिमे गद्य-रचना छपबथि, से सामयिक राजनीतिक-सामाजिक-साहित्यिक टिप्पणी हो वा कोनो ज्वलन्त समस्यापर दीर्घ वैचारिक निबन्ध हो । अभाव-अभियोग आ पाठकीय पत्र सेहो, मैटर घटि गेलापर, ककरो नामसँ दऽ देथि । सामयिक टिप्पणी अनेक बेर सम्पादकीय पृष्ठपर जाइत छलनि ।

हिनक कलम कागतपर द्रुत गतिएँ बढ़ल जाइनि, कतहु शिथिल नहि होइनि, कटकुटक प्रश्ने नहि उठनि, जे एक बेर लिखि देलनि से फाइनल भऽ जाइनि । लिखबा काल कथूक सहायताक प्रयोजन नहि पड़नि, बीचमे अखबार देखबाक काज नहि । ककरो आबि गेलापर ओतबे काल कलम रुकनि जतबा काल आगन्तुक हिनका लग बैसल रहथि । अक्षर छोट-छोट, खूब सुन्दर नहि तँ बेजाइयो नहि, पढ़बामे असुविधा नहि, पंक्ति ऊर्ध्वमुख भऽ जाइनि ।

मिथिला मिहिरक संपादक सुधांशु 'शेखर' चौधरी सेहो जे लिखथि से एक्के बेर । हुनको कतहु कटकुट नहि होइनि । बामा हाथे लिखथि, अक्षर बिना सीरक लिखथि, काट बड़ नीक होइनि आ पाँती सोझ । गति मद्धिम । एक पात यावत् संपादकजीकैं पुरनि ता मोहनजी तीन पात लिखि लेथि । दुनू वरिष्ठ व्यक्तिक लेखन-विधि चकित करऽवला छलनि ।

मितभाषी मिष्टभाषी रहथि । नियमी संयमी रहथि । उदार रहथि, मुदा साहखर्ची नहि । डेरापर आपकतासँ आगतक सत्कार करथि । जलपानक बाद अपने हाथसँ पान देथिन,

अपनहुँ खाथि । परिचित-आत्मीयक कुशल-क्षेम बुझबाक उत्सुकता रहनि, ओकर सुखमे सुखी होथि, ओकर दुखमे दुखी—भावुक तेहने ।

मिथिला मिहिर कार्यालयमे साहित्यकारक अवर्यात लगले रहैत छलैक । समवयस्क सुमनजी, यात्रीजी, किरणजी, मधुपजी लोकनिसँ खुलिकऽ गप्प करथि । परवर्ती खाढ़ीक साहित्यिकसँ, जनिकासँ बड़ आत्मीय लागि भऽ गेल छलनि तनिका छोड़ि, घुलथि-मिलथि नहि । जतबे प्रयोजन ततबे बाजथि, कोनो जिज्ञासाक अल्प शब्दमे उत्तर दऽ चुप भऽ जाथि । किन्तु, आगन्तुकक प्रति स्नेह-आदर भावमे कसरि नहि करथि । सतहपर देखनिहारकेँ कदाचित भऽ सकैत छलैक जे उपेक्षित भऽ रहल अछि, मुदा साहित्यिक दृष्टि राखऽवलाकेँ हुनक मौन मुद्रामे अपना प्रति स्नेहभाव अवश्य हुलकी मारैत भेटैत छलैक ।

शीर्ष पीढ़ीक कवि रहथि, मुदा कविसम्मेलनमे जाथि नहि । युवावस्थामे एक घटनासँ व्यथित भऽ कविसम्मेलनमे नहि जयबाक शपथ लऽ लेलनि । पद-रचना उत्तम कोटिक करथि, ओकर प्रस्तुतियोक ढंग आकर्षक रहनि । कविसम्मेलनमे वाहवाही भेटनि । हिनक प्रतिस्पर्धीगणकेँ हिनक लोकप्रियता अखरनि । ताहिमे एक जन, पूर्व निर्धारित योजनानुसार, अपन किछु समर्थक द्वारा हिनका 'हूट' करबा देलथिन । ई भावुक रहबे करथि, विचलित भऽ गेलाह आ भविष्यमे कविसम्मेलनमे जयबे छोड़ि देलनि । एहि प्रसंगक उल्लेख करैत एक ठाम कहने छथि — 'कवि-सम्मेलनक मंचो कवि-परिचयक एक प्रशस्त माध्यम थिकैक । किन्तु, ओतऽ हम जाइते नहि रहलहुँ, नवे-नवमे एक बेर, किछु प्रसंगे तेहन भऽ गेलैक जे बड़ कचोट भेल, तेँ ओतऽ जायब छोड़ि देलिऐक । से आइ धरि निमहैत जा रहल अछि । परिवर्तित स्थितिमे, आब ओ गोलैसी कमि गेलैक अछि — मंचस्थ कोनो कविकेँ उठयबाक क्रममे जे-जेहन होइत होइक, ककरो खसयबाक हेतु बेसी हठ-आग्रह जीवित-जाग्रत नहि ।' परिवर्तित स्थितिमे प्रतिज्ञा तोड़बो कयलनि तँ मृत्युसँ दुइए मास पूर्व । प्राय: चालिस वर्षक बाद पहिल बेर आ अन्तिम बेर सेहो, १६ मार्च १९८० कँ मैथिली अकादमी पटना द्वारा आयोजित कविसम्मेलनमे ई सार्वजनिक मंचसँ काव्य-पाठ कयलनि । रेडियोमे मुदा बराबरि जाइत रहलाह ।

कविसम्मेलनक त्याग कविक लेल साधारण नहि थिक । हिनक स्वाभिमानक ई बड़का दृष्टान्त थिक । ई स्वयं कहैत छथि — 'स्वाभिमान बड़ प्रिय; कतेक सम्भव लाभ छोड़ैत रहलहुँ अछि एकर आगिसँ धन कि मान—ततेक हृदयावर्जक नहि, जतेक कि स्वाभिमान । चाटु बुद्धि धरितहुँ तँ धन-मान बेसी भेटैत, मुदा से कहियो नहि सोहायल,, फुल-चठैल भऽ जीवनकेँ दुतिया देलहुँ ।' एहिसँ जे हानि, ताहूसँ ई परिचित छलाह आ तकरा अंगीकार कयलनि । ताहि लेल हिनका कचोट नहि छलनि, संतोष छलनि । कहैत छथि—'अपण क्षीण स्थितिकेँ ततेक क्षीण रूपमे नहि लैत छी, सन्तोष मानि लैत छी जे यथासंभव कमसँ कम गिड़गिड़यलहुँ, दँतखिष्ठी कयलहुँ । रहल दु:ख-सुखक अनुभूति, से 'सर्वं परवशं दु:खम् सर्वत्र च स्व-वशं सुखम्' उक्ति यथार्थे थिकैक । अपने जे जतबे साधन, सैह संबल ।'

Indian ...
117156
10.12.04

स्वाभिमानक कारणेँ आरो पैघ हानि उठौने रहथि । आर्यावर्तमे प्रूफ-संशोधक रहथि तँ पत्रमे किछु अशुद्ध छपि गेलैक । तत्कालीन सम्पादक जे बड़ दबंग, प्रभावशाली एवं क्रोधी रहथि, हिनका बजाकऽ किछु अप्रिय कहलथिन । ई उत्तर देलथिन—हम तँ प्रूफरीडर छी, कापियेमे अशुद्ध रहैत छैक तँ हम की करियौक । से सुधार करबाक अधिकार हमरा नहि अछि । सम्पादक एकरा सम्पादकीय विभागक योग्यतापर आक्षेप-रूपमे लेलथिन आ प्रमाण प्रस्तुत करऽ कहलथिन । ठीक ओकर प्राते, सम्पादकीयमे प्रयुक्त एक अशुद्ध शब्दकेँ लऽ जाकऽ देखबैत ई कहलथिन जे अपनेक लिखलकेँ हम बदलि नहि सकैत छी, आ यैह जँ छपत तँ काल्हि अपने हमरा दोष देब । सम्पादक निरुत्तर भऽ गेलाह आ हिनकापर आँखि गुरड़ैत, आफिस छोड़ि, विदा भऽ गेलाह । ओ अपमान हुनका बहुत दिन धरि मन रहलनि आ तेँ मिथिला मिहिरमे जाहि योग्यताक ई अधिकारी छलाह, ताहिसँ नीचाँक पद देल गेलनि ।

ओहि घटनाकेँ ई एक दुर्घटना मानलनि आ ताहिसँ ओहि सम्पादकक प्रति हिनक हृदयमे जे उच्च भावना छलनि, ताहिमे रंचो मात्र स्खलन नहि होबऽ देलनि ।

आर्यावर्त प्रेसमे पद हिनक कोनो उच्च नहि छलनि, किन्तु मधुर व्यवहारक कारणेँ आ ताहूसँ बेसी प्रखर पाण्डित्यक कारणेँ पछाति ओहि कम्पनीक जे उच्चस्थ पदाधिकारीगण रहथि — मैनेजर, आर्यावर्त-इंडियन नेशनक संपादक — से यदाकदा हिनका लग आबि कुशल-मंगल पूछथि, आपकता देखबथि, कोनो शास्त्रीय जिज्ञासा रहनि तँ तकर चर्चा करथि ।

अपन पाण्डित्य आ कवित्वक बलपर बाहरोक विशिष्ट व्यक्तिसँ हिनक सम्पर्क रहनि, यद्यपि बड़ परिगणित, से संकोची स्वभावक कारणेँ । विख्यात ज्योतिषी पद्मश्री विष्णुकान्तझासँ निकट सम्पर्क रहनि । आरंभमे अवश्य यैह हुनकासँ सम्पर्क बढ़ौने होयताह, लाभान्वितो भेल होयताह, किन्तु बादमे ज्योतिषीजी यावत् जीलाह, हिनक सम्मान करैत रहलाह । हुनक यशवर्धनमे हिनक सारस्वत योगदान सहायक होइत रहलनि ।

हिनक जीवन पूर्वार्धमे तँ अव्यवस्थित रहलनि, किन्तु पटनामे स्थायित्व भेटि गेलापर गृहस्थीकेँ सुचारु बना लेलनि । दुनू कन्या मनोनुकूल स्थानपर गेलथिन, जमाय पटनेमे जीविकापन्न भेलथिन । एक मात्र बालक सेहो नौकरी प्राप्त कऽ लेलथिन तँ ई पारिवारिक दायित्वसँ निश्चिन्त भेलाह । पटनामे ई अपन सकल परिवारक बीच सुख-चैनसँ छलाह ।

नैष्ठिक ओ व्यवस्थाप्रिय छलाह । पूजा-अनुष्ठान पहिने योगक्षेमक साधन-रूपमे करैत छलाह । बादमे, जखन तकर प्रयोजन नहि रहलनि तैयो ओकरा जारिए रखलनि, किन्तु ततबे जाहिसँ दैनन्दिन कार्यमे असौकर्य नहि होइनि । अनुशासनकेँ पहिने अपनापर लागू करथि, तखन दोसरोसँ ओकर अपेक्षा राखथि । परिश्रम, निष्ठा, ईमानदारी सँ अपनाकेँ वनौने छलाह आ प्रतिष्ठित कयने छलाह, तकर निर्वाह ई अपन आश्रित-अपेक्षितोसँ चाहैत छलाह ।

आरंभमे जे हिनक अहित कयने छलथिन, बादमे ई ताहि स्थितिमे आबि गेल छलाह जे हुनक बखिया उघारि दितथि, किन्तु मूर्तिभंजक ई नहि छलाह । मूर्तिभंजन हिनका इष्ट

नहि । तहिना, अनीतिसँ प्राप्त धनकेँ ई अधलाह मानैत छलाह । हिनक मान्यता छलनि जे एहन धन अस्वास्थ्यकर थिक—बीमारीसँ देह फूलब थिक, हृष्टपुष्ट होयब नहि थिक । निम्नलिखित पंक्तिमे हिनक जीवन-दर्शन आबि गेल अछि:

व्यवस्था-बन्धन जते, से संतुलन थिक
मूर्तिभंजक जनु बनह, हित-हानि जानह !
नीचतासँ दस्यु होइछ, असुर होइछ
उच्चतासँ शिष्ट होइछ, देव होइछ
अमर्यादित धाप दऽ जँ दौड़ि बढ़बह
क्षणिक हित, पुनि अन्त दुर्गति, ठेसि खसबह
रोग पोसि, अपथ्य खा, जे किछु मोटयबह
शोथ थिक से, पुष्टता नहि-ध्यान आनह !

मधुरिमा हिनक व्यक्तित्वमे रसिबसि गेल रहनि । मधुर स्वभाव, मधुर व्यवहार, मधुर संभाषण, मधुर काव्य, मधुर भोजन हिनका प्रिय । हिनक मधुर भाव-स्वभाव चिरचर्चित छल । मधुर-प्रिय ततेक रहथि जे मधुमेहसँ ग्रस्त भेलाक बादो, चिकित्सकक वर्जन कयलोपर, परहेजकेँ तोड़ि कहियो काल मिष्टान्नसँ जिह्वातृप्ति कैए लेथि, भनहि ताहि कारणेँ व्याधिवृद्धि भऽ जाइनि, कष्ट बढ़ि जाइनि । मधुर-रसिकतापर हिनक काव्यटिप्पणी द्रष्टव्य थिक :

मधुर भावना औखन मनकेँ झटकि लैत अछि
मानय कहाँ बुढ़ारी, ई सटि लटकि लैत अछि
ककरो वयस शरीरक नहि ई रोचे राखय
चिन्त्य निन्द्य स्थिति ककरो, नहि तहि सोचे माखय
कोना कतऽसँ बिरड़ो बनि खन झपटि लैत अछि
जा सम्हरी ता बाहुपाशमे समटि लैत अछि

राजनीतिक भीड़ ई कहियो नहि गेलाह, मुदा राजनीतिबोध हिनकामे भीजल छलनि । एक तँ पत्रकार होयबाक कारणेँ, दोसर प्रान्तीय राजनीतिक केन्द्रमे रहबाक कारणेँ ओकर गीरह-गीरहसँ ई परिचित छलाह । ई ओहि राजनीतिक विचारधारासँ अपनाकेँ जुड़ल पबैत छलाह जे भारतीय अस्मिताक पोषक अछि । साम्प्रदायिकताक कट्टर शत्रु छलाह, धर्मक राजनीतीकरणकेँ समाजक अशान्तिक कारण मानैत छलाह । हिनक शिव-संकल्प छलनि 'सर्वे भवन्तु सुखिन:'—

सभ हो सुखी, दुखी क्यो नहि-शिव-संकल्पी हम
राजनीति किछु करओ, धर्म ले' की ध्वंसी क्रम ?

सर्जना

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन' मिथिला मिहिरक सम्पादकीय विभागमे नहि आयल रहितथि तँ कविताक अतिरिक्त किछु नहि लिखितथि । काव्य-गंगा तँ अवश्य प्रवाहित होइत रहैत, किन्तु गद्य-यमुनाक दर्शन नहि होइत, ओ सरस्वती बनि हिनक हृदयेमे नुकायल रहि जाइत । किन्तु से भेल नहि, गद्यमे हिनक प्रवाह सेहो वेगमे चलल आ सत्रह बर्ष धरि मिहिरक फसिलकेँ उर्वर बनवैत रहल । तखन, एतबा स्पष्टे जे गद्य-रचना हिनक आवश्यकता छलनि, काव्य-रचना हृदयक उद्गार । प्रेम गद्योक प्रति छलनिहेँ, मुदा काव्यक प्रति अनुराग छलनि, भक्ति छलनि, समर्पण छलनि । तेँ, 'मोहन' कविएक रूपमे आदृत भेलाह, प्रचुर आ विलक्षण गद्य-रचना रहितहुँ ताहि क्षेत्रमे हिनक यथोचित यश पसरल नहि । किन्तु, जे काव्यमय आकर्षक ललित सूत्रात्मक सुरेब गद्यक आवेसी होयताह, तनिका अवश्य हिनक गद्यो आकृष्ट करैत रहतनि । मुदा, भविष्यक अनुसन्धायक-हेतु हिनक गद्यकेँ ताकब बड़का समस्या भऽ जायत । तकर कारण ई जे गद्यक कोनो पोथी तँ नहिएँ छनि, मिथिला मिहिरक सम्पूर्ण सत्रह वर्षक फाइलकेँ उनटा गेलो उत्तर हिनक अपन नामसँ गनल-गुथल पाँच-दस गद्य-लेख अभरि जाइक तँ सैह बहुत । हिनक अधिक की, प्राय: सभ गद्य-रचना मिथिला मिहिरक सम्पादकीय पृष्ठसँ लऽ कऽ अन्तिम पृष्ठ धरि अनेक छद्मनामसँ, किछु अनामको, छिड़िआयल छनि, जे पकड़बा लेल किछुओ विवेचक-बुद्धि तँ चाहबे करी ।

किन्तु, काव्य-रचनामे ई समस्या नहि अछि । हिनक प्राय: समस्त प्रकाशित काव्यरचना की तँ पूरा नाम अथवा उपनाम सहित छपल छनि । से छपल छनि अनेक पत्रिकामे, जाहिमे किछु तँ आब दुर्लभ ऐतिहासिक अभिलेख भऽ गेल अछि, जेना मिथिला मोद, पुरना मिथिला मिहिर, विभूति, भारती आदि ।

सभ टा काव्य-रचना एखनहुँ धरि संकलित-संगृहीत नहि छनि । संगृहीत बड़ थोड़ छनि, एक तेहाइक करीब, दू पोथी मात्र । ताहूमे एक टा तँ मृत्युक बादे छपि सकलनि । एक टा जीवन-कालमे प्रकाशितो भेलनि तँ सान्ध्यबेलामे, अवकाश-प्राप्तिक बाद । एहि दुनूक अतिरिक्त, पोथी नहि अपितु पुस्तिका कहक चाही, सोरह पृष्ठक गीत-संग्रह छपल छलनि १९४२ मे । काव्य-रचना ताहूसँ दस-बारह वर्ष पूर्वेसँ जारी छलनि ।

काव्यक स्रोत फुटलनि छात्रावस्थेमे, जखन प्रथमामे रहथि । जेना-जेना वयस्क होइत गेलाह प्रतिभा विकसित होइत गेलनि । आरम्भमे हिन्दी, पुनि उच्च कक्षामे गेलापर संस्कृत माध्यम रहनि । एहि दुनू भाषाक तुलनामे मैथिलीमे थोड़ लिखथि । तकर कारणो छलैक।

संस्कृत साहित्यक ई अध्येता रहथि, ओकर विशाल आ समृद्ध काव्य-सम्पदासँ मुग्ध । तेँ ओकर अनुकरण सहज स्वाभाविक छल । कविकेँ एहिमे गतियो प्रचुर छलनि । कालेजक वातावरणो संस्कृतमय, प्रोत्साहन आ प्रशंसाक खाद-पानि पाबि प्रतिभा-लता लहलहा उठलनि। प्रकाश मुदा थोड़ वस्तु देखि सकलनि । ताहिमे उल्लेखनीय थिक 'उग्रवंशप्रशस्तिः' । ई प्रशस्ति-काव्य पुस्तकाकार भेलनि, शेष पड़ले रहि गेलनि ।

हिन्दी काव्यमे अधिक रुचि लेबाक सेहो कारण छलनि । मैथिलीक ओ मान ताहि दिन नहि छलैक । मैथिलीकेँ ताहि दिनुक शिक्षित समाज 'रजनी-सजनी' कहि उपहास करैत छल, मैथिली कविकेँ आदर देबा लेल तैयार नहि छल । सामाजिक विचारधारामे बहनिहारकेँ उपाये की छलैक । हँ, धाराकेँ मोड़बाक चेष्टा जोर पकड़ि रहल छल आ ताहिमे हिनको महत्त्वपूर्ण योगदान छलनि, मुदा पहिने तँ ओहि धाराक संग बहऽ पड़बे कयलनि । एकर अतिरिक्त एक कारण आर छल । हिनक कार्यक्षेत्र मिथिलासँ बाहर रहलनि, जाहि ठाम हिनक कवित्व तखनहिँ स्वीकार्य होइतनि जखन तकर भाषा ओकरा बुझबा-जोग होइतैक । काव्यक प्रयोजनमे 'यशसे अर्थकृते' सर्वोपरि छैक । हिनका दुहूक प्रयोजन, से मैथिलीसँ सिद्ध भेनिहार नहि छलनि । मुदा, मैथिली छुटलनि नहि ।

बम्बैसँ हिनका प्रत्यागत भेलापर मिथिला मिहिरक तत्कालीन सम्पादक सुरेन्द्रझा 'सुमन' एकनिष्ठ भऽ मैथिली-सेवा करऽ कहलथिन । सुमनजीसँ ई उपकृत, हुनका प्रति हिनक हृदयमे अगाध आस्था, तेँ हुनक आग्रहकेँ शिरोधार्य कऽ ई केवल मैथिलीए रचनामे रत रहऽ लगलाह । आन भाषा लगभग छुटि गेलनि । सुमनजीक प्रसंग हिनक धारणा हिनके शब्दमे द्रष्टव्य थिक — 'ओ हमर योगक्षेम आ विकास-प्रकाशक सजग चिन्तक' तथा 'भेंट भेल तँ ई कहि देलनि जे 'मैथिलीक सेवा अमूल्य सिद्ध होयत, एकर भण्डार भरियौक । एकरा एखन प्रयोजन छैक, संस्कृत-हिन्दीक क्षेत्र बड़ विशाल—भोतिआयले रहब ।' बात जँचल, लागि गेलहुँ ।' से सत्ते, मैथिली काव्यरचनामे ई लागिए गेलाह । हिनक लगन अपन रंग देखौलक । सुमनजीक प्रेरणारूपी खाद-पानि पाबि मैथिली भूमिपर हिनक काव्य-लता लहलहा उठल ।

हिनक काव्य गीतमुखी छल । गीतोक दूटा धारा रहलैक अछि—लोकरुखी एवं साहित्यरुखी । लोकरुखी गीत कविप्रसिद्धिक सहज माध्यम थिकैक, ताहि दिन बेसिए छलैक । एही बलपर अपन समकालीनमे 'मधुप' सर्वाधिक लोकप्रिय छलाह । हुनक गीत साहित्यिक वर्गक मुखापेक्षी नहि छलनि, ओतबे धरि सीमित नहि रहलनि । सामान्य लोक ओकरा हलसिकऽ अपना लैत छलनि । साहित्यरुखी गीतकारकेँ ख्याति नहि छलनि ।

'मधुप' तत्कालीन लोकप्रिय 'भास'केँ लेलनि, ओहि समयक ज्वलन्त समस्याकेँ पकड़लनि, जनमानसक थाह लगौलनि आ मनोरम शैलीमे सहज गीतमालिकाकेँ सजौलनि—लेसलनि जे चमकिते गेलनि । लोकगीतात्मक शैलीमे रचित 'मधुप'क पहिल पुस्तिका 'अपूर्व रसगुल्ला' १९४१ मे अबिते धूम मचा देने छल । मधुपे जकाँ ई प्रतिभा मोहनोमे छलनि । फलतः ई 'मधुप'केँ जबर्दस्त चुनौती देलथिन ।

'मोहन'क किछु सहकर्मी इंडियन नेशन प्रेससँ, जतहि ई कार्यरत छलाह, 'फूलडाली' नामसँ हिनक एक गीत-पुस्तिका १९४२ मे प्रकाशित करौलनि, जे बहराइते 'अपूर्व रसगुल्ले' जकाँ जनकण्ठमे विराजमान भऽ गेलैक। दुनू एक तर्जपर, दुनू एक रंग लोकप्रिय। दुनू कविक काव्यप्रतिभाक तुलनात्मक अध्ययन तखनुक सुधीसमाजक बीच बहसक एक रोचक सामग्री छल।

'फूलडाली'क रचयिता उपेन्द्र ठाकुर नहि, केवल 'मोहन' छथि। सौँसे पुस्तिकामे हिनक पूरा नाम केवल एक ठाम कवरक तेसर पृष्ठपर हिनक प्रकाश्यमान पोथी 'मधुमती'क विज्ञापनक क्रममे अछि, जे श्री नारायणदास व्यवस्थापकक नामसँ छपल अछि। ओहि विज्ञापनमे हिनक कविव्यक्तित्वक विषयमे जे कहल गेल अछि, से हिनक महत्त्वकेँ रेखांकित करैत अछि। तेँ, ओ पूरा विज्ञापन एतऽ उद्धृत कयल जा रहल अछि, जकर शीर्षक रूपमे अछि—मैथिलीक नवीन धाराक स्फुट कविताक संकलन।

'मैथिलीक कविता-प्रेमी सहृदयवर्गकेँ ई बूझि अतीव हर्ष हैत जे हमरालोकनि मैथिलीक हृदयवादी सहृदय-प्रिय कवि साहित्याचार्य पं० श्री उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'जीक चुनल-चुनल हृदयस्पर्शी कविताक संकलन-पुस्तक प्रकाशित करबाक व्यवस्था कै रहल छी। 'मोहन'जीक मोहन प्रतिभा 'मिहिर' 'भारती' और 'मोद' आदि मैथिली पत्र-पत्रिकाक पाठकसँ पूर्ण परिचित अछि। हिनक पतझड़क गानमे मधुमय सरस भाव ओतप्रोत रहैछ।'

हिनका 'हृदयवादी' अर्थात् भावुक कवि कहल गेल अछि। तात्पर्य जे हिनक कविता पाठककेँ भावनामे बहयबाक क्षमता रखैत अछि, से मानल गेल अछि। जे ककरो भावनामे बहा देबाक क्षमता राखत से 'सहृदय-प्रिय' होयबे करत। हिनक 'मोहन प्रतिभा' तकरे सूचक थिक। हिनक कविताक सम्बन्धमे मुख्य बात जे कहल गेल अछि से थिक 'पतझड़क गानमे मधुमय सरस भाव'क से प्रवाह जाहिमे सभ ओतप्रोत भऽ जाइछ। अर्थात्, मनहूसो लोक, अरसिको व्यक्ति हिनक ललित गीत सुनि लेत तँ ओकर मन गद्गद् भऽ उठतैक, ओकरामे सरसताक संचार भऽ जयतैक। उदीयमान कविक लेल ई उक्ति ओकर विशेष स्थितिक सूचक थिकैक। से स्थिति 'मोहन'केँ रहनि।

'फूलडाली'मे विज्ञापित 'मधुमती' कहियो छपल नहि। ओकर पाण्डुलिपि तैयारो कयल गेल कि नहि, से आब क्यो नहि कहि सकैछ। 'मधुमती' नहि छपल, मुदा तत्कालीन सभ पत्रिकामे 'मोहन'क मधुमय गीत लगातार छपैत रहल। गीत केवल श्रृंगार-भावसँ ओतप्रोते नहि, उद्बोधन उत्साह ओ प्रेरणासँ भरल-पुरल सेहो; तत्कालीन सामाजिक अभिशापकेँ रेखांकित करैत, हृदयकेँ झिकझोरैत सेहो; श्रमिकक संघर्षकेँ स्वर दैत, सामन्तीक विरोध करैत सेहो; लोकमानसमे स्वदेश-स्वभाषाक ज्योति जगबैत, कर्तव्य-बोध करबैत सेहो।

हिनक गीतक ई सभ स्वर एवं ओकर काव्यत्व हिनका लोकगीतकारक श्रेणीसँ ऊपर उठा देलकनि आ समकालीन श्रेष्ठ कविक पाँतीमे बैसा देलकनि।

हिनक महत्त्वकेँ रेखांकित करऽबला एक उल्लेखनीय तथ्य इहो थिक जे १९४१ मे, जखन हिनक ओहो फूलडाली नहि छपल छलनि, अखिल भारतीय मैथिली साहित्य परिषद् दिससँ, रमानाथझाक सम्पादकत्वमे, एक टा काव्य-संकलन छपलैक 'मैथिली पद्य संग्रह', जे ऐतिहासिक क्रमक पालन करैत आधुनिक ढंगक पहिल काव्यसंकलन छलैक। पटना विश्वविद्यालयक इंटरमीडिएट कक्षाक लेल पाठ्यग्रन्थक रूपमे ओकर प्रकाशन भेल छलैक । ताहिमे नव पीढ़ीक किछुए उदीयमान कविकेँ शामिल कयल गेल छलनि, जाहिमे एक मोहनो रहथि । हिनक कवि-स्वीकृतिक ई बड़का प्रमाण थिक । एकर बाद, मैथिलीक जे कोनो महत्त्वपूर्ण काव्यसंकलन बहरयलैक, जाहि कोनो वर्गक हेतु, ताहि सभमे हिनक कविता अवश्य शामिल कयल जाइत रहलनि ।

कविता उच्चविद्यालय एवं विश्वविद्यालयक पाठ्यग्रन्थमे शामिल भेलनि, तत्कालीन प्रसिद्ध पत्रिकाक प्रमुख पृष्ठपर छपनि, इतिहास-ग्रन्थमे चर्चित भेलनि, समीक्षक-सम्पादकक ध्यान आकृष्ट कयलकनि, से सभ होइत रहलनि, किन्तु कवि अपने काव्य-संग्रह, १९७७ सँ पूर्व धरि, प्रकाशित नहि करौलनि । जनिक कविता १९४१ मे विश्वविद्यालयीय पाठ्यग्रन्थमे शामिल भऽ चुकल हो, कवि-रूपमे जे दीर्घ कालसँ सुप्रतिष्ठित भऽ चुकल होथि, जनिक काव्यसाधना चालिस-पैंतालिस वर्षसँ अनवरत चलैत होइनि, तनिक, १९४२ मे लघुकाय पुस्तिका (फूलडाली) केँ छोड़ि, कोनो काव्यसंग्रह नहि आयल हो, से विस्मयजनक थिक ।

जीविकासँ अवकाश प्राप्त कऽ लेलाक बाद, सुमनजीक उद्योगेँ प्राप्त किछु सरकारी साहाय्यसँ तथा किछु अपनो लगाकऽ 'बाजि उठल मुरली' १९७७ मे प्रकाशित करौलनि, जाहिपर कविकेँ १९७८क साहित्य अकादेमी पुरस्कारसँ अलंकृत कयल गेलनि ।

कविता-सग्रहक प्रकाशनकेँ ई महत्त्व नहि दैत छलाह एहन बात नहि छल, किन्तु एतबा सावकाश नहि भेलनि जे अपन संग्रह छपबितथि । अपन कचोटकेँ ई एहि शब्दमे व्यक्त कयने छथि—'सामयिक पत्र-पत्रिकामे छपितो रहलापर, पुस्तकाकार नहि छपलासँ, कोनो कवि पूर्णत: सुपरिचित-ख्यात नहि होइत अछि ।.....पूर्व प्रकाशित संग्रह आ मंचक परिचय-ख्याति हमरा पक्षमे नहि रहल अछि । तेँ एहि संग्रहकेँ लऽ कऽ उपस्थित होइत काल, कने संकोचक अनुभव कऽ रहल छी—किछु झुझुआइत-धखाइत छी । कदाचित् कतहु ई जिज्ञासा ने उठि जाइक जे 'ई नव के ?' ओना, मैथिली क्षेत्रक पुरातन आ अधुनातन गतिविधिक अवगति रखनिहारसँ हम अपरिचित होइ, ई कथमपि संभव नहि । आकृतिसँ जे नहियोँ चिन्हैत होथि, कवितागत प्रकृति-अनुभूतिसँ चिन्हिते होयताह ।'

जकर अशंका ई व्यक्त कयने छथि—'ई नव के ?'—ई स्थिति तँ हिनका नहिएँ छलनि, मैथिलीसँ सामान्यो परिचय रखनिहार हिनक नाम जनैत छलनि, हिनका प्रतिष्ठा दैत छलनि, तखन एतबा अवश्य जे संग्रहक अभावमे हिनक काव्य-वैशिष्ट्यपर जतेक जमिकऽ विचार होयबाक चाहैत छल से भेल नहि ।

साहित्य अकादेमी पुरस्कार भेटलाक बाद हिनक व्यक्तित्व-कृतित्वपर एकाधिक

लेख-समीक्षा छपल । ताहिमे किछुकें तँ ओ देखबो कयलनि आ ओहिसँ हृष्टो भेलाह । पुरस्कार-प्राप्तिक बाद डेढ़ वर्षसँ कमे ई जीवित रहलाह । तेसर काव्यसंग्रह हिनक मृत्युक बाद १९८२ मे छपलनि । प्रकाशक अपने मने ओकर नाम राखि देलक 'इतिश्री' । दृष्टिकोण ई जे कविक देहान्तक बाद हुनक साहित्यक इतिश्री भऽ गेलनि । किन्तु, संग्रह-रूपमे ओ इतिश्री नहि भऽ सकैछ । जतेक हिनक कविता पत्र-पत्रिकामे छिड़िआयल अछि तकरा एक ठाम संकलित कयल जाय तँ प्रकाशित तीनू काव्यसंग्रहक समेकित मोटाइसँ ओ बेसी भऽ जायत ।

ई हिनक केवल काव्यक विषयमे कहल गेल अछि । मिहिरमे प्रकाशित विजयानन्द, कुंजरंजन, सुदर्शन, पुण्डरीक, बामनशास्त्री, काश्यप, ठाकुर, उपेन्द्र मोहन ठाकुर आदि विभिन्न छद्मनामसँ, वा संपादकीय पृष्ठमे अनामक, हिनक विविध गद्यकें समटि कऽ एक जिल्दमे छापल जाय तँ ओ हजार पृष्ठसँ टपिये जायत ।

काव्य : प्रथम उत्थान

फूलडालीक प्रकाशन 'मोहन'क कविजीवनक प्रथम अवस्थाक उत्थान-कालमे भेल छल एवं बाजि उठल मुरलीक प्रकाशन चरम अवस्थाक विश्राम-कालमे । बीचक महत्त्वपूर्ण पैंतिस वर्ष संग्रहविहीन बीति गेलनि । ओहि पैंतिस वर्षमे हिनक काव्य प्रगतिक अनेक सोपानकेँ टपैत रहलनि ।

फूलडालीमे जाहि प्रकृतिक गीत-सुमन संचित अछि, से ओहीटामे चयनित भेल । बादमे छिड़िआयले रहि गेल । कालान्तरे मौलाकऽ बिला गेल ।

१९४२ मे ओकर प्रकाशन भेल छल । सन् १९४२ भारतीय स्वाधीनता-संग्रामक इतिहासमे क्रान्तिक तूर्यनाद करबाक कारणेँ अमर भऽ गेल अछि । 'अंग्रेज, भारत छोड़'—नारा सौंसे राष्ट्रमे एक स्वरसँ गूँजल छल । प्रान्तीय भेद, आन्तरिक विचार-धाराक भेद, भाषा-संस्कृतिक भेद—सभ टा मेटा गेल छल । सम्पूर्ण भारतीय जनमानस आक्रोशक एके महालहरिमे समा गेल छल, तखने ई नारा लागल छल । ई स्थिति एक दिनमे नहि भेल छलैक । विभिन्न समाजक मानसक एकीकरणक प्रक्रिया पहिनहिसँ प्रारम्भ भऽ चुकल छलैक । एकर प्रभाव साहित्योपर पड़लैक । मैथिली साहित्यमे विशेषत: एहि रूपेँ पड़लैक जे ओकर वर्ण्यविषय व्यापक भऽ गेलैक । कवि 'मोहन' पर सेहो पड़लनि, से एहि रूपेँ जे तत्कालीन जनरुचिक शैली आ वस्तुकेँ ई अपनौलनि, भनहि ओ मैथिलीक पारम्परिक शैली आ वस्तु नहि छल ।

'मोहन' संस्कृतक पण्डित, मैथिल आचार-विचारक पोषक, परम्पराक समर्थक रहथि, किन्तु परिवर्तनक प्रभाव हिनकोपर पड़लनि । सामाजिक विकृतिकेँ ई प्रतिरोधी स्वर देलनि, यथास्थितिमे परिवर्तनक आह्वान कयलनि, कमजोर वर्गक पक्ष लेलनि, अत्याचारीकेँ ललकारलनि ।

चन्दाझा साहित्यकेँ जनजीवन दिस एक बेर मोड़ि तँ देने रहथि, मुदा 'मोहन'क समय धरि अबैत-अबैत साहित्य पुन: वर्गीय होबऽ लागल छल । किछु कवि अवश्य अपवाद छलाह, किन्तु अधिक कविक रचना जनसामान्यक बोधक परिधिसँ बाहर छल ।

एकर एक कारण आर छल । मैथिली विश्वविद्यालयमे प्रवेश कऽ चुकल छल । तत्कालीन उदीयमान कविगण ताहि स्तरयोग्य काव्यनिर्माणक आग्रही भेलाह, तकर एक हेतु तँ ई छल जे मैथिलीपर स्तरहीनताक अभियोग नहि लगैक, दोसर हेतु इहो भऽ सकैत छल जे कवि स्वयंकेँ ओहि संग्रहमे शामिल होयबाक लेल समुत्सुक रहल होथि । एहि प्रकारक

एक काव्य-संग्रह १९४१ मे प्रकाशितो भेल छल, जाहिमे शामिल भेनिहारमे किछु उदीयमान भाग्यशाली कविमे एक मोहनो छलाह । एतऽ ई ध्यातव्य जे ओहि संग्रहमे मधुप, किरण, यात्रीक कविता शामिल नहि भेल छलनि । अत: पर्याप्त कारण छल जे 'मोहन' अपनाकेँ स्तरीय कवि मानि, लोकगीतात्मक शैलीमे काव्य-रचनासँ परहेज करितथि । किन्तु, से ई नहि कयलनि ।

'मोहन' काव्यकेँ जनताक बीच लऽ जयबाक पक्षधर छलाह । अतएव, ई जनताक समस्याकेँ जनतेक शब्दमे व्यक्त कयलनि । लय सेहो ओहने रखलनि जे ओकर ठोरपर अनायास आबि जाइक । तत्कालीन आनो भाषाक लोकप्रिय गीतक, सिने-गीत समेतक, भासकेँ अपन शब्दसँ सजौलनि आ समाजकेँ समर्पित कऽ देलनि । लोक ओकरा लोकि लेलक ।

फूलडालीक प्रस्तावना-स्थानीय 'अपन बात' मे एहि तथ्यकेँ उद्घाटित करैत कवि स्वयं कहने छथि :

'सम्प्रति कोर्सक योग्य आदर्श पुस्तक तैयार करबाक अतिरिक्तहु मैथिलीमे बहुत किछु जरूरति छैक । एतय बंकिमचन्द्र वा प्रेमचन्दक नामी कृतिए सन नहि, 'तोता-मैना' तथा 'सहस्र रजनी चरित्र'हुक सन वस्तुक नितान्त अपेक्षा छैक । गाबक हेतु आब तिरहुत, बटगमनी आदि प्राचीनहि लय पर्याप्त नहि, गजल, कब्वाली तथा फिल्मी तर्जक गानाक युग आबि गेल छैक । शहरसँ सम्पर्क रखनिहार मैथिल युवकमे उर्दू-प्रचुर हिन्दीक यथोक्त गीतक समादर अछि तथा देहाती युवकमे भोजपुरीक । मैथिलीमे एहि तर्ज सबहुकेँ गीतबद्ध कै गीतक शौकीन वर्गक सन्तोष अर्जित करब अनावश्यक नहि ।'

फूलडालीक प्रकाशनक मुख्य उद्देश्य 'गीतक शैकीन वर्गक सन्तोष अर्जित करब' छल । एहि प्रकारक गीत सामान्यत: स्तरहीन मानल जाइत अछि आ ओकर कविकेँ प्रबुद्ध वर्गक बीच ओ आदर नहि भेटैत छनि जे साहित्यिक काव्यक रचयिताकेँ प्राप्त होइत छनि । 'मोहन' समादरप्राप्त साहित्यिक कवि छलाह, विश्वविद्यालयीय पाठ्यसंग्रहमे सम्मिलित छलाह । से होइतहुँ, लोकप्रियताक दौड़मे सेहो शामिल होबऽ चाहैत छलाह, मुदा ओहूमे एकदम हलुकायब इष्ट नहि छलनि । तेँ, एहू प्रकारक गीतमे साहित्यिक पुट दऽ दैत छलाह । एहि बातकेँ ई 'अपन बात' मे प्रकारान्तरसँ प्रकाशितो कऽ देलनि, तकर कारण प्राय: ई रहल होयत जे स्तरहीनताक दोषसँ बाँचि जाथि । हिनक उक्ति जे 'हमर साहित्यिक मित्रलोकनिक कथन छैन्हि जे एहिमे केवल लयक अनुरूप पद-योजना-मात्र नहि, ठाम-ठाम हृदयावर्जक भावहु पूर्ण अछि—सामाजिक दुर्गुणक प्रति क्रान्ति-भावनाक स्रोतहु पर्याप्त अछि । जँ से सत्य तँ हमरा तोष हैत ।'—ओही उद्देश्यकेँ झलकबैत अछि ।

फूलडालीक मुखपृष्ठपर निम्नलिखित श्लोक अछि, जे संग्रहक 'मोटो'थिक :

विलासो वीरभावश्च समं यत्रावतिष्ठते ।
उन्मदिष्णु: क्रान्तिकृच्च तारुण्यं वयसो रस: ।

ई श्लोक एही कविक रचित प्रतीत होइत अछि । एकर आशय थिक 'युवावस्थामे

उन्मादक शृंगार एवं क्रान्तिकारी वीरभाव दुनू समान रूपेँ विद्यमान रहैछ ।' युवक 'मोहन' युवा-मन-मोहन ललित आ ओजपूर्ण दुनू प्रकारक गीतकाव्य-कुसुमकेँ प्रस्तुत फूलडालीमे चुनि-चुनि तरुणवर्गक प्रीत्यर्थ करकमलमे अर्पित कयने छथि । तात्पर्य, विलास आ वीरभाव, अर्थात् शृंगार आ ओज दुनू प्रकारक जीवन-सुमन एहि फूलडालीमे संचित अछि ।

एहिमे एकतिस गोट गीत अछि जे दू खण्डमे विभक्त अछि ।'शृंगार कुसुम' खण्डमे सत्रह टा एवं 'क्रान्ति कुसुम' खण्डमे चौदह टा गीत अछि । गीत शीर्षक आ संख्या-विहीन अछि, केवल ऊपरमे तर्जक नाम देल अछि । तैसटा हिन्दीक, तीन टा भोजपुरीक, दू टा मगही गीतक तर्ज अछि । तीन टा तर्ज मैथिली गीतक सेहो अछि ।

शृंगार कुसुममे संचित सत्रहो गीतमे अधिकांश उन्मुक्त शृंगार अछि, जाहिमे कवित्व कम ठाम, वासना-उत्तेजना अधिक ठाम अछि । किन्तु, जतऽ कवित्व अछि से उच्च कोटिक अछि, अभिव्यंजनापूर्ण अछि ।

प्रथम गीतमे कवि प्रेमक महत्त्वकेँ प्रतिपादित कयलनि अछि । एहि पंक्तिमे चमत्कार आबि गेल अछि :

प्रेम बिनु जीवन-प्रवाहक मान की ?
प्रेम बिनु जीवन बहीरक कान थिक ।

तथा —

प्रेम बिनु जग ठूठ नीमक वन जकाँ
प्रेम बिनु जग बिना चन्द्रक गगन थिक ।

प्रेमहीन जीवनक तुलना बहीरक कान, ठूठ नीमक वन एवं बिना चन्द्रक गगनसँ कऽ कवि अपन कल्पनाक प्रौढ़ता देखा देलनि, ई इंगित करा देलनि जे सहजो गीतबन्धमे मौलिकताक दर्शन कयल जा सकैछ, काव्यत्व आनल जा सकैछ ।

एक गीत अछि जाहिमे नायिका नायककेँ अपन भाव-भंगिमा द्वारा आकृष्ट करैत अछि आ नायक ओकर रूपपाशमे बाझि छटपटा उठैत अछि । नायकक एहि उक्ति मे विलक्षण काव्यक दृष्टान्त प्रस्तुत भेल अछि :

करेजामे कसक हमरा, रभसि ओ मुसकुरा दै छथि ।
तकै छी हम हेरायल भोन, ओ सुधि-बुधि चोरा लै छथि ॥
रसक लस्सा लगा, लग्गी कटाक्षक ओ चला दै छथि
चिड़ै सन मन बझै एम्हर, ओम्हर ओ खिलखिला दै छथि ॥

... ...

जनाबी हम अपन दुख-दर्द, मुँह बिचकाय लै छथि ओ
हमर तृष्णा उघरि जाइछ, अपन आँचर झपै छथि ओ ॥

नायिका कटाक्षक लग्गी मे रसक लस्सा लगाकऽ नायकक मन-पंछीकेँ बझा लैत अछि । पंछी छटपटा जाइछ आ शिकारिन खिलखिला उठैछ । एहि दू पाँतीमे उर्दू शेरक

त्वरित आकर्षण-क्षमता निहित अछि । तहिना, 'आँचर झपलासँ तृष्णा उघरब' विरोधाभास अलंकारक श्रेष्ठ नमूना थिक ।

एहि खण्डक शेष गीत काव्यक अभिधा शैलीमे उन्मुक्त शृंगारक अछि, कतहु-कतहु अश्लीलता-दोषसँ युक्त सेहो, जाहिमे काव्य-तत्त्व तिरोहित भऽ गेल अछि । अन्तिम गीत पहिले गीत सदृश प्रेम-विषयक अछि, जाहिमे प्रेमक व्यापकताकेँ द्योतित करैत ओकर पवित्रताकेँ दर्शाओल गेल अछि :

प्रेमक मन्दिर, प्रेमक प्रतिमा, प्रेमक पूजा, प्रेमक महिमा
प्रेमक रंग, प्रेम लालिमा, प्रेमक बरइछ टेम, प्रियतम !

दोसर खण्ड 'क्रान्ति कुसुम' काव्यक दृष्टिएँ अधिक परिपक्व एवं विषयक दृष्टिएँ तत्कालीन ज्वलंत समस्या सभसँ संपृक्त अछि ।

ताहि युगमे सर्वाधिक ज्वलंत छल वैवाहिक समस्या । मिथिलाक ई एहन भीषण समस्या छल, एहिमे तेहन-तेहन विकृति आबि गेल छलैक जे सामाजिक संरचनेपर आघात होबऽ लागल छल । बेमेल विवाहक पसाही लागि गेल छलैक तथा ओकर तापमे साँसे मिथिला झरकि रहल छल । बेमेल एक प्रकारक नहि, प्राय: एकर जतेक प्रकार भऽ सकैत छैक, सभ टा प्रकार एतऽ साकार भऽ रहल छल । बेमेल वयस लऽ कऽ — वर बूढ़ कन्या बालिका, अथवा कन्या समर्थि वर बच्चा; बेमल शिक्षा लऽ कऽ, रूप लऽ कऽ, धन लऽ कऽ, पाँजि लऽ कऽ—एक शिखरपर दोसर पौदानपर । एहि सभ बेमेल विवाहक करणेँ मिथिलाक वर्तमान कलंकित भऽ रहल छल, भविष्य चौपट्ट भऽ रहल छल ।

एकर विरोधमे स्वर उठब शुरू भऽ गेल छल । हरिमोहनझाक 'कन्यादान' आबि गेल छलनि, यात्रीक 'बूढ़ वर' आ 'विलाप' लोकमानसमे भीजि रहल छल, 'मधुप'क गुंजारमे विद्रोहक झंकार जगजियार भऽ रहल छल । 'मोहन' सेहो वैवाहिक प्रथाक विकृतिसँ ओतबे विचलित छलाह ।

क्रान्ति कुसुमक चौदह टा गीतमेसँ छौ टा वैवाहिके कुप्रथापर आधारित अछि—पहिल, दोसर आ चारिमसँ सातम धरि ।

काटर प्रथाक कारणेँ धनक लोभमे कन्याक पिता अपन कलीसन बेटीकेँ प्रौढ़ पुरुषक संग गेँठ जोड़ि दैत छल । दुनूक बीच कड़ीक काज करैत छल घटक, जकर फुसिएटाक खेती छलैक । पहिल गीतक विषयवस्तु अछि—एक प्रौढ़ व्यक्ति समर्थि कन्याक संग विवाह करबाक उद्देश्यैं अपन बीघो भरि खेत भरना राखि धन एकट्ठा करैत अछि, मुदा घटकक फेरमे पड़ि ओकर विवाह डेढ़बितनी छौड़ी सँ भऽ जाइत छैक, तखनुका ओकर मानसिक वेदनाक मार्मिक वर्णन कविक शब्दमे द्रष्टव्य थिक :

कहू की यार, कनियाँमे ठका गेलहुँ, टका गनि कै ।
घटक से चण्ठ, कठपुतरी देया देलक, अपन बनि कै ॥

... ...

रसक गप-सप करत के हाय, छाती ई कोना जूड़य

नेना-भुटकाक हाँजक सङ लतामक लेल ओ घूमय ।
जेहन गरजू छलहुँ,तेहने पड़ल डाका, हृदय हहरल
होइत जे फूलमाला, से गराँमे घेघ बनि लटकल ॥

एक दिस एहन स्थिति छल, दोसर दिस ठीक एकर विपरीत जखन युवती कन्या बटुक वरक संग साटि देल जाइत छल । कन्याक व्यथा कविक शब्दमे देखल जा सकैछ :

कहू ककरा अपन दुख, सखि बितय जे
सगर निशि नोरसँ आँचर तितय जे
अबोधक संग जे हमरा बियाहल
समर्थक प्यासकेँ की ओ न जानल ?
जगै अनुराग, मनमे आँच लागय
उचित आहुति बिना तनकेँ जराबय
तखन मन होय गर हाँसू लगाबी...

तेसर स्थिति छल सुयोग्य सुशीला कन्याकेँ मूर्खचपाट वरसँ विवाह भऽ जायब :

कारी महीस सन छनि अक्षर कतेक वरकेँ
भौंजिक सिखौल ठक-बक जौँ चीन्हि लेथि तेँ की ?
व्यवहार और भाषा छनि धर्कटक, अशिष्टक
तँ घाठिकेँ अनेरे बेसन बनाय फल की ?

एहि विकृति सभक वर्णन टा कऽ कवि छोड़ि नहि देने छथि, अपितु समाजकेँ सोचबाक लेल प्रश्न सेहो ठाढ़ कयने छथि । किछु दृष्टान्त :

समाजक बीच बेटि-बेचबाक ने किछु दण्ड वा बन्धन
बहीरक राजमे रे हाय ! के सूनत हमर क्रन्दन !

दोसर —

चरबाह होथि वर तँ रस-गीत गाबिए की ?

तेसर —

जते बन्धन तते छी उन्मुक्त हम
वासनामे बहि रहल विधवाक दुख ।
गर्भ-हत्या सहत, आश्रय देत नहि
जड़ समाज बढ़ा रहल विधवाक दुख ।

चारिम —

अरे भलमानुष, धनक ई लोभ ! छिः रोकू पतन
तजू गाय समान कन्यापर कसाइपना अपन ।

समाज जखन टुटबापर होइछ, पारिवारिक अन्तर्कलह बढ़ि जाइछ, जाहिमे समिधाक काज करैछ घरक स्त्री । सामाजिक अध:पतनकेँ रोकबाक हेतु कवि नारीकेँ मना करैत छथि :

पतिक कान फूकि हाय, विष-पुड़िया छीटि हाय
घरमे झगड़ा लगाय, ने घिनाउ अहाँ दाइ !
भाइ-भाइमे लड़ाइ ने कराउ अहाँ दाइ....

सामाजिक मिथ्याचारपर सेहो कवि चोट कयने छथि । समाजमे क्यो केहनो गरीब अछि, उपनयन-विवाहमे खर्च करब अनिवार्य भऽ जाइत छैक । समाजक दबावपर खर्च तँ ओ कऽ लैत अछि, किन्तु भविष्य ओकर चौपट्ट भऽ जाइत छैक । कवि एहि मिथ्या आडम्बरक विरोधी छथि, एकरा 'नाशक कुनीति' कहैत छथि :

खेत ओझराय होय शोभा-सुन्दर
भोज-भातमे बिकायल बरुआक घर
दस समाज बैसि करथि भोजकेर लिस्ट
बरुआ भिखारि हैत, कहू ध्यान इष्ट ?

मिथिलाक एहि दुर्गतिक प्रधान कारण अशिक्षा थिक । यावत लोक शिक्षित नहि होयत, यथास्थिति बदलत नहि । शिक्षो आधुनिक समाजक उपयुक्त होयबाक चाही, अर्थकरी होयबाक चाही । आजुक युग प्रतिस्पर्धाक छैक, डिग्री गेटि लेलासँ काज चलनिहार नहि थिक । ज्ञानकेँ बढ़ायब नहि, विकासशील समाजक संग दौड़ब नहि, जतहि छी ततहि पड़ल रहब तँ अपन आ अपन समाज दुनूक दुर्गतिक कारण बनब । पढब बढ़ब तँ अपना संग अपन समाजोकेँ आगाँ बढ़ायब :

पढ़ि-लिखि जँ घर बैसि बितायब
घर-समाजमे मूढ़ गनायब
युवती विधवा सन दुख पायब
अर्थकरी विद्या बनाउ, औ
सोचि-विचारि पढ़ू ।
पढ़लहुँ जौं तँ छी की उन्मन ?
देह खसौने छी की जड़-सन ?
साहस करू, फिरू औ रन-वन
पृथ्वी वसुन्धरा, बन्ध्या नहि
छथि शारदा, बढ़ू ।

सामन्ती अत्याचार मिथिलामे पराकाष्ठापर छलैक । जमींदार अपन रैयतपर क्रूर शासन करैत छल । एकर जीवन्त-ज्वलन्त दृष्टान्त 'मधुप'क विख्यात कृति 'घसल अठन्नी' प्रस्तुत करैत अछि । कवि 'मोहन' सेहो ओहि क्रूर प्रथाक विपक्षमे ठाढ़ भेलाह एवं ओकर विरुद्ध अंगरक वर्षा कयलनि :

नर जातिकेँ निशाचर कै दैछ जमींदारी
बिनु मृत्यु किसानक ई यमराज जमींदारी
कड़कैत सैदमे नित, झहरैत बुंदमे नित

खेती किसान करइछ, फल खाय जमींदारी......

खटैछ किसान भोगैछ जमींदार, जेना बैसल बिलाड़िकेँ तीन बखरा ! एकरा अंगरेज-शासनक अभिशापे टा नहि, धार्मिक संस्कारसँ जोड़ैत कवि एकरा 'पाप' धरि कहि देलनि अछि । गरीबक पाप एहि लेल थिक जे ओकरामे 'धर्म' क लेश नहि छैक :

गरीबक ग्रास जथा सूदिमे हथिया लै छी
युधिष्ठिर लाख बनू, किन्तु हैत धर्म कहाँ ?
पड़ोसीकेर नेना अन्न बिनु तड़पै-मुरझै
घटाघट दूध-दही खाइ अहाँ, धर्म कहाँ ?

जमींदारक प्रति जतबे कविक हृदयमे आक्रोश छनि, श्रमिकक प्रति ततबे सहानुभूति । शारीरिक श्रमक प्रतिरूप, समाजक उत्थान-लेल सतत जागरूक बोनिहारक जीवनकेँ ई जाहि मार्मिकताक संग साकार कयलनि अछि, से अद्वितीय अछि । श्रमिकवर्गपर रचित समस्त मैथिली गीतमालामे ई फूल सभसँ भकरार अछि । हिनक अपन समकालीन कविक मध्य उच्चासन प्रदान करबा लेल, हिनक प्रगतिवादी विचारधाराक पुष्ट प्रमाण-लेल एही टा गीतकेँ राखि देब पर्याप्त होयत । किछु पाँती द्रष्टव्य थिक :

बोनिक भोजन, बोनिक पहिरन, बोनिक उद्‌गार हमर बाबू
बोनिक अछि तन, बोनिक जीवन, बोनिक संसार हमर बाबू

... ...

गामक हम जन हरबाह और शहरक मजदूर-कुली हमहीं
दुनियाँमे क्यो ने हमर हाय, हम सभक, श्रमिक छी हम बाबू

... ...

वर्षा बरसै, घर भरि चूबै, जाड़क ऋतुमे ठिठुरी हम सब
विनु खर कोड़ो, झकझक हड्‌डी, दुखमरू श्रमिक छी हम, बाबू

एहिमे श्रमिकवर्गक त्याग-बलिदान ओ वेदनाक वर्णन जतेक विस्तारसँ भेल अछि, ओकर आक्रोश ततेक तीव्रतासँ नहि फुटल अछि । ई एकर दुर्बल पक्ष कहल जा सकैछ । किन्तु एकर दोष कविकेँ नहि, ओहि समयक सामाजिक परिवेशकेँ देल जा सकैछ ।

भोजपुरीक विदेसियाक तर्जपर ई 'तिरहुतिया' लिखलनि, जाहिमे तिरहुतक तत्कालीन सामाजिक-सांस्कृतिक-सांस्कारिक-शैक्षिक स्थितिक विश्लेषण करैत स्वदेशी भावना भरबाक संगहि नारी-स्वावलंवनक शिक्षा देल गेल अछि । किछु अंश उद्धृत अछि —

तास-सतरंज छोड़ू, भाङकेर गंज छोड़ू, देखू निज काज-धाज आब तिरहुतिया
जूमपर जूम छोड़ू, गप्पकेर धूम छोड़ू, बढ़बाक यत्न करू, आब तिरहुतिया

तथा :

उचित सुधार करू, चर्खाक प्रचार करू, शिक्षाक प्रसार करू, नित तिरहुतिया
तखन विचार देती, जीवनक भार लेती, सुखक संसार नारी हेती, तिरहुतिया

अन्तिम गीत उद्‌बोधन थिक, जाहि माध्यमे मिथिला-मैथिल-मैथिलीक उत्थान-लेल

आह्वान कयल गेल अछि । कवि रूढ़िक अहितकर पक्षक आलोचक छथि तथा प्रगतिवादक नीक पक्षक ओकील । जतऽ जे नीक अछि, वर्तमान समाजक लेल जे हितकर अछि, से अवश्य ग्राह्य थिक, किन्तु कोनो पक्षक अन्ध समर्थन हिनका स्वीकार्य नहि छनि । नवयुवकक हृदयकेँ झिकझोड़ैत कवि कहैत छथि :

युवक-बन्धु जागू, आगू भै पोछु ने जननीक नोर
शिथिला मिथिला ताकथि अहिँ दिस, कत दिन रहब कठोर ?

... ...

प्रगतिशील जगमे नहि होऊ अहाँ इजोतक चोर
सभक हेतु मधुमास, सहै छी अहाँ शिशिर झिकझोर ।
उठू, संगठन-शंख बजाऊ, करू सुधारक भोर
'मिथिला-मैथिल-मैथिलीक जय' नाचय सबहक ठोर ।

प्रगतिशीलताकेँ ग्रहण करबाक आह्वानक संग मिथिला-मैथिल-मैथिलीक जयघोष करैत फूलडाली पूर्ण होइत अछि ।

मैथिली भाषा आ साहित्यक प्रति एहि ठामक समाजक उपेक्षा-भावपर सेहो कविक ध्यान स्वभावत: गेल छनि आ एकरो ई एहि ठामक अभिशापक एक कारण मानने छथि । एहि दिस दू ठाम कविक अंगुलि-निर्देश अछि, यथा —

नहि शुद्ध शब्द परिचित, भाषाक प्रेम नहि छनि ।

तथा

ने समाज आ साहित्यक दिस ककरहु अछि दृगकोर ।

एकर अतिरिक्त, 'मैथिलीक जय'क पाछाँ मातृभाषाक उत्थानक भाव स्पष्टत: झलकैत अछि ।

लोकगीतात्मक शैलीक एहि आरम्भिक कृतिमे कविक व्यापक दृष्टिकोण, प्रगतिशील विचारधारा आ कवित्व प्रतिभाक चमक भेटि जाइत अछि । फूलडालीक फूलसभ ताहि दिनक लोक हुलसिकऽ अपनौलक, जी-भरि सुंघलक, कंठक माला बनौलक । मुदा, फूल तँ फूले थिक — कालक झरकमे मौला गेल । कवि जलक सिच्चा दऽ कऽ ओकरा डगडगौने रखितथि, से नहि कयलनि । फूलडाली खाली भऽ गेलापर फेरसँ ओकरा भरबाक चेष्टो नहि देखौलनि । ने ओकर दोसर संस्करण भेलैक आ ने एहि जातिक गीतक दोसरे कृति आयल । कवि पाछाँ मुड़िकऽ तकलनि नहि, आगाँ बढ़ि गेलाह ।

काव्य : मान्यता

'मोहन' कवि रहथि, मुदा आँखि मूनिकऽ कविता नहि लिखथि । कविताक आलोचक-समीक्षक-रूपमे हिनक नाम नहि लेल जाइत छनि, मुदा कविताक बदलैत स्वरूपसँ ई नीक जकाँ परिचित छलाह आ ओहिपर अपन बारीक नजरि रखैत छलाह । नव-पुरान कवितापर ई टिप्पणी करैत छलाह आ ओहि प्रसंग अपन स्पष्ट विचार दैत छलाह । ई दृष्टिबोध हिनका मिहिरमे अयलाक बाद प्रांजल भेलनि ।

मिथिला मिहिर मैथिलीक प्रतिनिधि साप्ताहिक पत्रिका छल, जाहिमे सभ ढंगक वस्तु स्थान पबैत छल । ओ कोनो पक्षक, कोनो वादक, कोनो प्रवृत्तिक, कोनो धाराक ने विरोधी छल ने ध्वजवाहक । प्राचीन शैलीक पद-रचना आ नवीनतम शैलीक काव्य-प्रयोग समान रूपेँ ओकर पन्नापर अबैत छलैक । तटस्थ दृष्टि रखितो युगसँ निरपेक्ष नहि छल, अतः कहल जा सकैछ, झुकाव ओकर नवीनते दिस छलैक । सम्पादक सुधांशु 'शेखर' चौधरी स्वयं नवताक पक्षधर छलाह । अत: स्वाभाविक छल जे प्रतिभाशाली नवीन कविक ओ आदर्श मंच बनि गेल छल । मैथिलीमे जतेक नवीन प्रयोग होइत छल, से प्राय: ओही माध्यमे लोकक समक्ष अबैत रहल ।

नव प्रयोग बाढ़ि जकाँ हुहुआइत अबैत छैक । बाढ़िमे पानि घोँका जाइत छैक, निर्मलता नष्ट भऽ जाइत छैक । ओ अपन पाछाँ पाँक छोड़िकऽ जायत कि बालुक ढेर, से तँ बाढ़ि हटलेपर ज्ञात कयल जा सकैछ । पहिने तँ लोक ओकर प्रवाहे देखैछ । जे बाढ़िक प्रेमी अछि, से स्वयं भसिअयबोमे आनन्दक अनुभव करैछ । जे प्रेमी नहि, से ओकर ध्वंसात्मक प्रकृतिपर खिन्न होइत अछि ।

'मोहन' मिथिला मिहिरक सम्पादकक सहकर्मी छलाह । नव प्रयोगक जे बाढ़ि आयल छल, तकर प्रवाहकेँ चाहितो ई रोकि नहि सकैत छलाह । संस्कृतक विद्वान् छलाह, दृष्टिसम्पन्न कवि छलाह,तेँ बाढ़िकेँ ई समयक स्वभाव बूझि अपरिहार्य मानैत छलाह, मुदा स्वयकेँ ओहीमे बहा नहि दैत छलाह, घोँकायल पानिमे हेलैत नहि छलाह, तटस्थ भऽ ओकर निरीक्षण करैत छलाह आ ओकर नीक-बेजायपर अपन टिप्पणी सेहो, विभिन्न छद्मनामसँ, देने जाइत छलाह । ई ने अधिक खिन्ने होइत छलाह ने आह्लादिते । समष्टि रूपेँ देखलापर झुकाव खिन्नते दिस बुझना जायत । मिथिला मिहिरक सम्पादकसँ एहि अर्थमे ई भिन्न छलाह ।

प्रयोगधर्मी कविताक तँ ई प्रकाशनपूर्व बोद्धा पाठक छलाहे, एहि वर्गक कवियोसभसँ

व्यक्तिगत सम्पर्क, मिहिरमे रहबाक कारणेँ, हिनका रहनि । फलत: हुनकालोकनिक मान्यता आ दृष्टिकोणक साक्षात् अनुभव हिनका प्राप्त भऽ जाइनि । हुनकालोकनिक मान्यतासँ लगले अवगत तँ भऽ जाइत छलाह, मुदा विमतिक स्थलपर अपन मान्यता हुनकालोकनिक समक्ष उपस्थित नहि करैत छलाह । तकर दू टा कारण छल ।

पहिल कारण तँ ई छल जे ओहि नवतावादी कविलोकनि आ हिनकामे पूरा एक-डेढ़ पीढ़ीक अन्तर छलनि । हिनक अन्तर्मुखी स्वभाव दुनूक बीच संवाद स्थापित करवासँ रोकैत छलनि । पत्रिकाक ई स्वयं सम्पादक नहि छलाह, तेँ ओहिमे प्रकाशित सामग्रीक हेतु अपनाकेँ साक्षात् उत्तरदायी नहि मानैत छलाह । अनेरे नवका लोकसँ अरारि नहि ठानऽ चाहैत छलाह जखन ई बुझैत छलाह जे सम्पादको ओकरेलोकनिक पक्षमे छथि ।

दोसर कारण ई छल जे नवकविगण हिनका परम्परावादी मानि लेने छल, हिनका नव काव्यक प्रशंसक वा समीक्षक नहि बुझैत छल, बिना हिनक सहमतियो प्रकाशनमे ओकरा असुविधा नहि छलैक, तखन किएक हिनका संग ओहिपर बहस करैत जखन ओ जनैत छल जे एहिसँ ओकरा कोनो लाभ नहि होइतैक ।

बहस तँ ई नहि करथि, किन्तु मौन स्वीकारो करबामे हिनक संस्कार बाधक भऽ जाइनि । अतएव, अपन दृष्टिकोणकेँ व्यक्त करबाक ई एक टा बाट ताकि लेलनि । से छल लेखन । जाहिसँ हिनका क्यो रोकि नहि सकैत छल । काव्यक विभिन्न पक्षपर, विभिन्न वादपर, विभिन्न मान्यतापर, विभिन्न स्वरूपपर, परम्परित आ नवकविताक तत्त्व, कथ्य आ शिल्पपर अनेको लेख मिहिरमे ई प्रकाशित करौलनि, अपन नामसँ नहिएँ, श्री ठाकुर वा उपेन्द्र मोहन ठाकुर वा अन्य छद्मनामसँ, से एहि कारणेँ जे अपने पत्रमे अपने लगातार छपब श्रेयस्कर नहि मानैत छलाह— ने यैह ने सम्पादके । ओहिमेसँ चुनल किछु लेख बाजि उठल मुरलीमे, भूमिका-रूपमे, पछाति शामिल कऽ लेल गेल ।

चौबालिस पृष्ठक ओ भूमिका 'कवि आ कविता: दशा आ दिशा' नामसँ विभिन्न उपशीर्षकमे बटल (जे मिहिरमे स्वतंत्र लेख-रूपमे पूर्व प्रकाशित छल) पोथीमे देल अछि, जाहिमे एकतालिस पृष्ठ काव्यक प्रसंग हिनक मान्यताक खुलासा अछि ।

पूर्वमे कहल जा चुकल अछि जे काव्यमे नवताक प्रवेशक ई खानखा विरोधिए नहि छलाह, परिवर्तनकेँ समयक स्वभाव बूझि अपरिहार्य मानैत छलाह, किन्तु बाढ़िक घोँकल पानि तँ मानिते छलाह, जाहिसँ अपन काव्य-सरस्वतीकेँ अर्घ्य देब हिनका ग्राह्य नहि छलनि ।

नवीन आ प्राचीन कविताक अन्तर हिनक मस्तिष्कमे स्पष्ट छलनि जकरा ई एहि शब्दमे व्यक्त कयने छथि—'कविताक वर्ण्य विषयमे नव-पुरानक बीच भेद अवश्य आयल अछि । पुरान कवितामे प्राय: प्रकृतिक चित्रणक संग मानवक विभिन्न मन: स्थितिक समाज-जीवन अंकित अछि, किन्तु जेँ कि ई युग विषमताक विरुद्ध क्रान्ति टानि देने अछि, अर्थ-वैषम्यकेँ बेसी उत्तेजक-घृणास्पद रूपमे वाणी देल जाइत अछि । विश्व आइ समटिकऽ छोट भऽ गेलैक अछि, सभ ठामक बसात एतऽ झिकझोर मचौने अछि, बहुतो लोक ओकरा आत्मसात् कऽ रहल अछि । तेँ तेहने साहित्य बेसी उजागर । राजनीतिक वाद-विशेषक प्रभाव एहि परम्परामे पूर्ण स्पष्ट ।'

अन्यायक प्रतिरोध-विरोध करबकें कवि-कर्म ई मानैत छथि, किन्तु कविताकें वाद-बद्ध भऽ जायब हिनक विचारें अनुचित थिक । ई एहू तर्कसँ सहमत नहि छथि जे शोषणक प्रति आक्रोश प्रगतिवादिये कविताक धर्म थिक, पूर्वक नहि । हिनक स्पष्ट मान्यता छनि जे ई आधुनिक कविताक वर्ण्य-विषय बनल अछि से नहि, अपितु प्राचीनो कवितामे ई क्रान्ति-भाव मुखर भेल अछि । एते धरि जे 'अतीतो युगमे उत्पीड़न-शोषणक प्रति आक्रोश प्रकट कयले गेलैक—आदिकविक शोके श्लोकत्व पौने छल—काम-मोहित क्रौंच-मिथुनमे एक वध व्याध अपन उदरपूर्त्ति लेल कयने छल, तैं । प्रथम क्रान्तिकारी आदिकवि वाल्मीकि भेलाह, की एहि तथ्यक अपलाप कयल जा सकैत अछि ?'

'मोहन' पाठकक रुचिकें सर्वोपरि मानितो वस्तुगत उत्कर्ष-अपकर्षक सत्ताकें एकदममँ अस्वीकार नहि करैत छथि । नवीन हो वा प्राचीन—जे वस्तु नीक छैक से नीक रहतैके, भनहिँ ककरो व्यक्तिगत रुचिक कारणेँ नीको बेजाय लागि जाइक । एकरा एहि तरहँ उदाहरणसँ सिद्ध करैत छथि—'आम-लताम-जामुन-बड़हर आदि सभक अपन-अपन विशिष्ट कोटि होइत छैक, फल रूपमे सभ एक थिक । क्यो बड़हर-आदियेकें पसिन्न करैत होअय आ ओकरे सर्वोत्कृष्ट कहय तँ से ओकर रुचिक विचित्रते कहल जा सकैत अछि, उत्कृष्टताबोधक ओ मापदण्ड किन्हु नहि ।' प्राचीनो काव्यक जाँचक कसौटी छैक, नवीनो काव्यक जाँचक छैक । आजुक स्थितिमे नीक वैह थिक जे सभ ठामसँ नीक वस्तु ग्रहण करैत अछि । 'विशिष्ट वस्तुक परिचय-अभिज्ञान लेल साहित्यशास्त्रमे बहुत-किछु निर्देशित कयल गेलैक अछि, आधुनिको युगमे तकर मान-मर्यादा अक्षुण्ण छैक । हँ, विदेशी संस्कारक आयातनसँ जे किछु नवता-बोध उपजलैक अछि, तकरो कसौटी छैके । प्राचीन अथवा नवीन प्रणालीक ताहि-ताहि विधाक मर्मज्ञसँ संबर्धित होयव, प्रशस्त-स्तुत्य मानले जा सकैछ । किछु एहनो प्रतिभा अछिये, जे प्राचीन-नवीनक आकर्षक तत्त्व लऽ मधु-सृष्टि कऽ रहल अछि आ ओकरो आस्वादकक संख्या अछिये—उक्ति वैचित्र्यक सौन्दर्य-माधुर्य एहन ठाम अनुभूतिक आधारशिला होइछ ।'

उत्कृष्ट काव्य ई तकरा मानैत छथि जे दोसरक हृदयमे लागिकऽ माथकें डोला देअय । से बिना प्रतिभे संभव नहि थिक । से प्रतिभावान पुरान शैलीक कवि छथि तँ तनिकोमे ई वैशिष्ट्य छनि आ नव शैलीक छथि तँ तनिकोमे ।'ई क्रम नव-पुरान दूहू पीढ़ीमे अछि आ जकरा सहज प्रतिभा छैक, जकरा कविता आर्द्र भऽ कऽ स्वयं वरण करैत छैक, ओहो दुहू पीढ़ीमे अछिये । नव कवितोक किछु सिद्धहस्त रचनाकार छथिये, जनिक पाँतीमे प्राणवन्त अभिव्यक्ति आ प्रभावी चमत्कारिता पाओल जाइत अछि । ओतऽ मुक्त छन्दोमे यति-लय ।'

नवतावादी कविलोकनिक बीच दू टा नारा बेश प्रचलित अछि—रचनाक प्रति ईमानदारी तथा भोगल यथार्थ । एहि दूनू नाराक प्रसंग 'मोहन' गंभीरतापूर्वक विचार कयलनि अछि आ एकरा व्यर्थ सिद्ध कयलनि अछि । कविक अनुसार ईमानदारी थिक सत्यनिष्ठता । वैह सत्यनिष्ठता ग्राह्य थिक जे क्रूर नहि हो, सत्य आ शिव हो । व्याधा, हरिण आ मुनिक प्रसिद्ध

कथाक उल्लेख करैत कवि कहैत छथि जे मुनिक ई कहब जे जे देखलक तकरा बजबाक शक्ति नहि छैक आ जे बाजत, से देखलक नहि—एवं युधिष्ठिरक कथन 'अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो वा' मे कोन सत्य सत्य थिक कोन सत्य असत्य (अमंगल) से बिना प्रश्ने बुझब असंभव थिक ।तेँ कविक स्पष्ट मान्यता छनि जे 'आजुक ईमानदारी अपना रूपमे अपर्याप्त थिक—तत्त्वहीन थिक', तेँ की बाजी आ की नहि बाजी से विचारक वस्तु थिक ।'

'भोगल यथार्थ'क प्रसंग हिनक मत छनि जे ई विदेशसँ आयल अछि ।' विदेशक नग्न-कामुकता-प्रचारी साहित्य आ छायाचित्र चरित्रकेँ खा गेल—नवतावादी साहित्यकार वर्ज्य रक्तसम्बन्धोक संग वैतरणी पारक वर्णन कऽ रहलाह अछि । ई रचनाक प्रति ईमानदारी आ भोगल यथार्थ जे थिकनि ! जानि ने व्यक्तिगत जीवनक वैमानी, शैतानी आ धुरफन्दीक वर्णन करबाक साहस छनि वा नहि । प्राचीन परम्परामे जीवन वा मन: स्थितिक ओहने चित्रण काम्य होइत छलैक जे चरित्रवर्धक होअय, नीक बाट दिस चलबाक प्रेरणा देअय । केवल सत्यं नहि, ओ शिवं होइत छल आ सुन्दरं तँ मूलभूते तत्त्व थिक । विकृति आ नग्नताक चित्रण, सत्यं जे होअय, शिवं-सुन्दरं तँ कथमपि नहिये ।'

भोगल यथार्थकेँ ई फैशन मानैत छथि । कहैत छथि—'आइ जेँ कि राजनीति 'पेशा' भऽ गेलैक अछि आ कवितो कलासाधनाक स्थानपर फैशन भऽ गेलैक अछि, रचना आ आचारमे ई भेद ।तैयो जँ क्यो ई कहय जे ओ भोगल यथार्थ लिखैत अछि आ रचनामे ईमानदार अछि तँ आजकु अन्तरराष्ट्रिय राजनीतिमे जेहन मनगढ़न्त प्रचार चलैत छैक, ताहिसँ भिन्न किछु नहि — किन्हु नहि ।'

नवकवितामे एक दिस भोगल यथार्थ, अर्थात् नग्न चित्रण भेटैत अछि तँ दोसर दिस अस्पष्टताक आरोप लगाओल जाइछ । कवितामे अर्थबोधक प्रसंग कवि कहैत छथि —'संस्कृत-बोद्धा आचार्य लोकनिक तँ जे -से, बड़-बड़ निविष्ट प्रोफेसरोलोकनि जे अंग्रेजी, हिन्दी, मैथिलीक क्षेत्रमे जीवनक बहुतो अंश बितौलनि; तनिकालोकनिक मुँहे सुनल गेल अछि जे 'हे औ, की कहू,तत्त्वार्थ धरि प्रवेशे नहि होइत अछि ?' तखन की एकरा लेल कोचिंग क्लास चलाओल जयतैक ?' अतएव, नवकवितावादीकेँ ई परामर्श दैत छथि जे 'किछु एहन अवश्य कयल जाइक, जे ई नवकविता अपन सुस्थिर प्रतिष्ठापूर्ण स्थान ग्रहण करय । ताहि लेल कि तँ सुस्पष्टता चाही, शब्द आ अर्थकेँ पदार्थक बोध करबाक जे शक्तिग्रहण-परम्परा छैक (साधर्म्य आदि लक्षणक संग) तकर आश्रयण अनिवार्य बूझल जाइक । जँ से नहि तँ एकरा प्रति आक्रोश बढ़ले जयतैक ।'

कवितामे अर्थबोधक प्रसंग अपन मान्यताकेँ कवि एहि प्रसिद्ध श्लोकक माध्यमे व्यक्त कयने छथि :

नान्ध्री-पयोधर इवातितरां प्रकाश: नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढ़: ।
अर्थो गिरा अपिहित: पिहितश्च कश्चित् संशोभते हि मरहट्ट-बधूकुचाभ: ।

(आन्ध्रदेशक तरुणीक स्तन जकाँ ने तेना फलकल-झाँपल रहय जे सभ लोक सहजेँ पूरा आकार बूझि जाय आ ने गुजराती तरुणीक स्तन जकाँ तेना जाँतल-पिचायल रहय जे

कोनो कल्पितो आकारक आभास नहि भऽ पाबय । कविताक अर्थ तेहने होयबाक चाही जे किछु फलकल आ किछु जाँतल रहय, जेना कि मराठा युवतीक स्तन होइत अछि ।) अतएव, हिनक मान्यता छनि जे 'एना नहि होअय जे ओहि झाँपल बस्तुक आकार-प्रकार बाहरेसँ बुझबा योग्य भऽ जाय । एहनो नहि चाही जे मोट आवरणमे ओ दृश्य वस्तुए अपन रूप-परिचय गमा देअय—तेहन जाँतनसँ जाँतब जे ओकर आकार-प्रकारक कोनहुना थाहे नहि लागय । मध्यवर्ती मार्ग इष्ट थिक जे किछु झँपलो अछि आ किछु थहगरो अछि ।'

सिद्धिक लेल गहन ज्ञान चाही । पल्लवग्राहितासँ सिद्धि तँ नहिएँ भेटैछ, अभिमान धरि जागि जाइछ । एहिमे सभसँ बेसी हानि अपने होइछ । एहन कविकेँ सड़क-छाप हीरोक संग तुलना करैत ई कहैत छथि -'की मजाल जे क्यो हिनका विरुद्ध कल्ला अलगाओत ? ओकर से गंजन भऽ जयतैक जे माथेपर हाथ राखत । शहर-बाजारक सड़क-चौबटियापरक 'हीरो' सँ जहिना क्यो संभ्रान्त नागरिक कात-करौट धऽ लैत अछि, तहिना एहन 'कला-पुरुष'लोकनिसँ ।'

छन्दक प्रसंग सेहो कवि स्पष्ट छथि । हिनक प्राय: कोनो कविता बिना छन्दक नहि छनि । नवकविताक आलोचना करैत ई कहैत छथि जे 'छन्दक बन्धन आइ बहुतो अंशमे तोड़ले सन । नवकविता एही पृष्ठभूमिपर ठाढ़े भेल अछि । छन्दकेँ तहिया पद्यमे अनिवार्य मानल जाइत छलैक, जेना माली कोनो उद्यानमे शोभावृक्षसभकेँ कैंचीसँ कपचैत रहैत अछि 'एक सीध' मे, जे बेउरेब नहि बुझाय, तेना । घरक सजाबटि आ देहक श्रृंगारोमे 'बे-तरतीब' रहबाक कोनो औचित्य नहि—यैह छन्द थिक । आजुक युग जेँ कि 'स्वच्छन्द' बनल रहऽ चाहैत अछि, अपन 'छन्द' (स्वतंत्रता) अक्षुण्ण राखऽ लागल अछि । कोनो हाँट-डाँट स्वीकार्य नहि, कोनो विधि-निषेध अनिवार्य नहि । सामाजिक आचरण आ साहित्यिक विचारणमे कतहु आरि-धूर नहि । जे फुरय, सैह करी । छन्दक उपेक्षामे दोसर कारण ईहो भेलैक जे ई 'मुक्तछन्दता' 'मड़रू-ढोँढाइ' पर्यन्तक हेतु कवि बनबाक बाट निर्बाध कऽ देलकैक—क्यो केहनो किछु निरर्थको पद-पाँती जोड़ि देलक तँ कविता भैये गेलैक । एतेक जे उड़ीस जकाँ कविसभ फड़ि गेलाह अछि, से एही मुक्तछन्दताक प्रसादेँ ।'

कवि मानैत छथि जे छन्दमुक्तता विदेशी प्रभाव थिक । विदेशक अनुकृति तँ हम करैत छी, किन्तु हमर अनुकृति विदेशी करैत अछि कि नहि, ताहिपर ध्यान नहि दैत छी । एहिसँ अपन हीनभावना प्रकट होइत अछि, जखन कि, कविक शब्दमे, वास्तविकता ई थिक जे 'चिन्तनक क्षेत्रमे भारत औखन जगद्गुरु अछिये । वेदव्यास जे चिन्तन दऽ गेलाह आ विभिन्न दर्शन जतेक दूर धरि सोचि गेल अछि जीवन आ जगतक सम्बन्धमे, ततेक धरि विदेशकेँ किएक फुरतैक ?'

सहृदयता कविक हेतु आवश्यक शर्त थिक, किन्तु ओ सहजात हो, निश्छल-निर्मल हो । नकली सहानुभूति देखौनिहार कवि नहि भऽ सकैछ आ ओकर कविता सार्थक नहि होयत । एहन कविताक तुलना कागजक फूलक संग करैत ई कहैत छथि — 'एहन दु:ख स्वयं-स्फूर्त होयबाक चाही — तेहन संवेदनशील मन:स्थिति भेनहि उद्गार सप्राण भऽ

सकत, कतहुसँ आयातित अथवा देखाउसक आधारपर जँ कृत्रिम कल्पना कयल जाय तँ से नकली होयत-कागजक फूल होयत जे देखैत फूल सन लगितो सौरभहीन रहत ।'

संवेदनशीलताकेँ कविक हेतु आवश्यक मानितो ई नवतावादीक संवेदनाक आग्रही नहि छथि । संवेदनाकेँ सनातन मानैत ई एहन कवि-समीक्षकसँ प्रश्न करैत छथि जे 'हमरा बुझने संवेदना भावना-वासना-अनुभूतिसँ भिन्न वस्तु भऽ नहि सकैत अछि—आ कोनो आजुक वा पहिलुक साहित्यमे संवेदनाक अभाव कल्पित कयल जाय तँ ओकर आस्वादता कोना संभव होयतैक ? जे क्यो जितेन्द्रिय कामहीन पुरुष होअय, ओकरा शृंगार-सर्वस्व कोनो सुन्दरीक कुटिल भंगिमाक जीवन्त वर्णनोसँ की रसानुभूति होयतैक ?'

साहित्यमे राजनीतिक ई घोर विरोधी रहथि—से प्राचीनताक समर्थनमे हो वा नवीनताक समर्थनमे । विभिन्न वर्गक साहित्यकारसँ साक्षात् सम्पर्कक कारणेँ परस्पर सौमनस्यक अभावक ई अनुभव करैत छलाह आ ताहि कारणेँ खिन्न रहैत छलाह । अपन खिन्नताकेँ ई एना व्यक्त कयने छथि—'ई लोकनि एक दोसरक कौचर्य करैत छथि । क्यो ककरो प्रशंसक नहि । हिनकोलोकनिमे दल-गुट-। सभमे वैमनस्य आ ककरो उठयबाक खसयबाक अभिनिवेश । ताही आधारपर पत्र-पत्रिकामे एक-दोसरक गुणानुवाद अथवा छिद्रान्वेषण । ताहिपरसँ नव-पुरानक झगड़ा-रगड़ा । एक दोसरकेँ थकिअयबा वा बढ़यबाक रस । नवका दल तँ मूर्ति-भंजनेपर वृत्त अछि । जे गट्टी नहि बनौने छथि, तेहनो बहुत छथि, मुदा परस्पर सौहार्द्र-समन्वय हिनकोमे बड़ थोड़ । आनक प्रशंसासँ अपन लाघव घोषित होयत, ई धारणा ।'

साहित्यकेँ राजनीतिसँ जोड़ि देलापर भनहि तात्कालिक लाभ बुझना जाइक, किन्तु परिणाम ओकर अधलाहे होयत । प्रपंच राजनीतिमे चला लेल जा सकैछ, साहित्यमे अधिक दिन धरि नहि चलि सकैछ ।'साहित्य जखन राजनीतिक कला-कौशल लऽ छल-छद्म दिस अभिमुख भऽ जाइछ तँ ओ मूलत: अपन उद्भव-स्रोतक पुण्य प्रवाहकेँ दूषित कऽ दैत अछि, गंगा नहि भऽ कऽ कर्मनाशा (लेरक नदी) भऽ उठैत अछि । जँ कोनो साहित्यकार एहि अध: पाती रुचिसँ अपनाकेँ नहि बचा सकय तँ ओ किन्हहुँ, तटस्थ पारखी दृष्टिमे, पूज्य-प्रतिष्ठित भऽ नहि सकैत अछि । जनताक दृष्टिमे धूरा झोँकल जा सकैत अछि, किन्तु एहन मायाजालक प्रभाव मायासँ अपराभूत बोद्धा लग भैये नहि सकैत अछि । थोड़बो लोक जँ तत्त्वज्ञानी अछि तँ एहिसँ हँसते ।'

ई राजनीति केवल कविए कविक बीच नहि रहैछ, अपितु आलोचकलोकनि सेहो ग्रस्त छथि, साहित्यक हेतु ई बेसी चिन्ताक विषय एहि कारणेँ थिक जे साहित्यिक मूल्यांकनक कौसटिएकेँ दूषित कऽ देल गेल अछि । हिनक शब्दमे 'देखल तँ ई जाइत अछि जे यैह हंस लोकनि बहुधा दूधकेँ पानि आ पानिकेँ दूध घोषित करबामे कनेको संकोचक अनुभव नहि करैत जाइत छथि । सरस्वतीक पुस्तक-वीणाक कौशल-कलाकेँ रूपायित कयनिहार निश्छल साधक आइ दलबन्दीक शिकार भऽ रहलाह अछि, सरस्वतीक वाहन हंसक कलुषित भावनासँ—पक्षपातसँ । ई हंसलोकनि दृढ़ निश्चय जकाँ कऽ लेने छथि जे 'जकरे खाइ तकरे

गाबी' अथवा कोनो गतातेँ अपन निकटक लोककेँ प्रशस्ति देयाबी, जे ने खुअबैत अछि ने अपन निकटक अछि, तकर गीत किएक गयबैक—किएक ओकरा मान्य पाँतीमे बैसऽ देबैक? से खाहे केहनो होअय, हाथ पकड़िकऽ ऊपर नहि घिचबैक । संभव रहने टाङ धऽ कऽ पाछाँ-नीचाँ कऽ देबैक ।' आलोचक द्वारा हिनक उपेक्षाक कारणेँ एहि वर्गपर एतेक कठोर ई भेल छथि, से आरोप हिनकापर एहि हेतु नहि लगाओल जा सकैछ जे एक तँ हिनक आत्मा संकीर्ण नहि छलनि आ दोसर ई जे ओहन आलोचकसँ साक्षात् सम्पर्क भेलापर जे अनुभव कयलनि, सैह ई लिखलनि ।

मधुप, सुमन आ यात्री आधुनिक मैथिली काव्यक वृहत्त्रयी मानल जाइत छथि, जे हिनके पीढ़ीक थिकथिन । तीनू तीन विचारधाराक छथि । पुरातनतावादीक आदर्श छथि 'मधुप' ओ 'सुमन' एवं नूतनतावादीक आदर्श यात्री । विडम्बना ई अछि जे परवर्ती कविगण अपने जाहि विचारधाराक रहैत छथि, से तँ हुनक महत्त्वकेँ शिरोधार्य करैत छथिन, विरोधी विचारधारावलाक दृष्टिमे ओ बहुधा हीन मानल जाइत छथि ।

'मोहन' अपन एहि तीनू समकालीनक प्रति समान आस्थाभाव देखौने छथि आ हिनकालोकनिक अवदानकेँ कालक सीमासँ बाहर मानने छथि । मधुप आ सुमनक प्रसंग हिनक विचार छनि जे 'सुमनजी आ मधुपजी निश्चय संस्कृति-संस्कृत-परम्पराक पोषक थिकाह, राजनीतिक संग हुनक काव्य संश्लिष्ट नहि, विदेशी संस्कारोक ओ पक्षधर नहि । आजुक 'चिकारी' भाषाक कवितासँ हुनकालोकनिकेँ नहि तौलल जा सकैत अछि ।' यात्रीक नवीनताक प्रशंसा करैत आ हुनक शिष्यवर्गकेँ चुटकी लैत ई कहैत छथि जे 'श्री यात्रीजी अपन अभिव्यक्तिमे दुरूह नहि छथि, किन्तु हुनक अनुकृति कयनिहार शिष्यसभमे बहुतो ठाम दुर्बोध्य । जँ ई कहल जाय जे यात्रीजीक बौद्धिक स्तर निम्न छनि आ ई शिष्यसभ उत्कृष्ट स्तरक, तँ से मन नहि मानैत अछि—यात्रीजीकेँ संस्कृत-परम्परोक संबल रहलनि, प्राय: तेँ धरती छोड़ैत नहि होयताह आ ई शिष्यसभ वायु-विहारी भऽ गेल होयथिन—बेसी प्रगल्भ, धरतीक परबाहियेे किए होयतनि ? यात्रीजीकेँ बिम्ब आ प्रीतकक शिल्प जे किछु होयतनि, ताहिमे शब्द-अर्थ अपन वैयाकरण-परिपाटीक धाख रखैत होयत, ओकर शक्तिग्रह अथवा साध्यर्म्य लक्षणक सहयोग लैत होयताह, किन्तु 'निरंकुशा: कवय:' केँ चरितार्थ कयनिहार शिष्यसभ से मसाला रखिते नहि छथिन, किंवा तकरा गुदानिते नहि छथिन ।'

उपर्युक्त मान्यताक आलोकमे 'मोहन'क काव्यक महत्त्वकेँ आँकल जा सकैत अछि ।

काव्य : चरम उत्थान

'मोहन'क काव्य-रचना बराबरि चलैत रहलनि जे तत्कालीन पत्र-पत्रिका सभमे छिड़िआयल छनि । फूलडालीक प्रकाशनक बाद ई लोकगीतात्मक शैलीकेँ परित्याग कऽ साहित्यिक गीत-शैलीकेँ सर्वतोभावेन अपना लेलनि आ ओही माध्यमे अपन भावोद्‌गार व्यक्त करैत रहलाह । हिनक गीतसभ पारम्परिक गीतसँ सर्वथा भिन्न अछि जकरा छन्द, शिल्प आ भावक दृष्टिएँ वर्तमान युगक शास्त्रीय गीत कहब बेसी समीचीन लगैत अछि । युगीन भाव-बोध-समन्वित गीतमे तँ सहजहिँ जे जाहिमे वियोग, प्रेम-अनुराग, ऋतु-वर्णन प्रभृति चर्वितचर्वण विषयकेँ सेहो कवि लेलनि अछि, ओहूमे पाठककेँ टटका स्वाद भेटैछ; किछु नवीनता, किछु उत्कृष्टता, किछु भिन्नताक भान होइछ ।

हिनका विद्यापति-परम्पराक परिवर्धित आधुनिक संस्करणक गीतकार कहल जा सकैछ । राधाकृष्णक प्रेम-अनुरागक वर्णन, प्रचुरतासँ, विद्यापतिए जकाँ, इहो कयने छथि, किन्तु ओकरा हुनक नकल वा छुच्छ अनुकरण नहि कहि सकैत छी । ओ तखन होइत जखन हिनक गीतक शरीरमे विद्यापतिक प्राण रहितनि । से नहि छनि । अपन गीतमे प्राण-प्रतिष्ठो ई अपनहिँ कयने छथि । विद्यापतिक प्रभाव छनि तँ बस एतबे जेना व्यक्ति कौलिक संस्कार ग्रहण करैत अछि । हिनक गीतमे विद्यापतिक रक्त तँ दौड़ैत छनि, विद्यापतिक वातावरण नहि छनि । हिनक गीतक समाज आधुनिक छनि, तेँ हिनक गीत आधुनिक थिकनि ।

विद्यापतिक स्वर्णिम गीत-परम्परा 'मोहन'क गीतमे रसिबसिकऽ से सुरभि विकीर्ण कयलक जकर लोकोत्तर महमहीसँ मैथिली-उपवन महमहा उठल । ई गमक क्योराक तेज सुगन्ध नहि जे दूरेसँ ककरो नाककेँ भरि देत, अपितु ई तँ गुलाबक मद्धिम मधुर सुवास थिक जे मन-प्राणकेँ 'तर' आ सुशीतल बनौने रहत आ पाठक झुमैत रहत । हिनक गीत पढ़ब तँ लागत जेना कत्तहु सुदूरमे मुरली बजैत हो—कदम्बक उँचका डारिक झरमुटमे—आ ओकर मादक ध्वनि सनसनायल सोझे हृदयमे प्रवेश कऽ जाइत हो आ अन्तस् कमलकेँ फुला दैत हो :

दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल
जी तरसिते रहल, ही उमड़िते रहल
क्यो रसिक श्याम सुधिमे उतरिते रहल
मन हहरिते रहल, तन लहरिते रहल

प्रेम-वियोग-अनुरागक अतिरिक्तो, भक्तिपद आ ऋतुगीतसँ भिन्नो, ई पर्याप्त गीतक

रचना कयने छथि जाहिमे शिल्पक वैविध्य आ विषयक व्यापकता सहजहिँ ध्यान आकृष्ट करैछ । हिनक गीतमे एक दिस राधाकृष्णसँ सम्बद्ध विरह-व्यथाक मार्मिक उच्छ्वास भेटैछ तँ दोसर दिस उद्बोधन-उत्साह सेहो; एक दिस ऋतु-वर्णनक छटा देखबामे अबैछ तँ दोसर दिस दार्शनिक निराशामूलक घटा सेहो; एक दिस कवि अभियान गीत गबैत भेटैत छथि तँ दोसर दिस हिनका फगुआक उमंगमे रस-रंगसँ सराबोर होइत सेहो देखैत छियनि; एक दिस नवतुरियाक मंगल-कामना-लेल अपन भावनाक सभ केबाड़ खोलि दैत प्रतीत होइत छथि तँ दोसर दिस मातृभाषाक उपेक्षीक प्रति दुत्कार-भाव सेहो व्यक्त करैत अभरैत छथि । वस्तुत: हिनक काव्य-क्षेत्र बहुत विस्तृत छनि । छन्दपर हिनक अधिकार विलक्षण अछि, रंग-विरंगक छान्दिक प्रयोगसँ सेहो काव्यमे चमत्कार भरि दैत छथि । स्वीकार करऽ पड़ैछ जे हिनक काव्य-साम्राज्यमे छन्द, वर्णन, शिल्प आ भावक समृद्ध खजाना विद्यमान छनि ।

समाजमे दू प्रकारक कवि भेटैत छथि—पण्डितकवि आ लोककवि । दुनूक अपन महत्त्व छनि। दुनूक काव्योक अपन-अपन स्थानपर महत्त्व अछि । पण्डितकवि विद्वान वर्गक बीच पूजल जाइत छथि, मुदा सामान्य जन लग हुनक पहुँच नहि होइत छनि । लोककवि समाजमे, कमसँ कम हुनक स्थानीय समाजमे, जानल-मानल जाइत छाथि, मुदा पण्डित समुदायक बीच हुनक मान्यता नहि रहैत छनि । एकक झुकाव चिन्तना दिस तँ दोसरक भावना दिस । एकक काव्य मस्तिष्कमे सनसनी अनैछ तँ दोसरक, हृदयमे झनझनी उत्पन्न करैछ । 'मोहन' छथि तँ पण्डितकवि, हिनक काव्य होइछ तँ शास्त्र-सम्मत, किन्तु हिनक गीतमे ई विशेषता छैक जे ओ मस्तिष्क आ हृदयकेँ एक संग एक रंग स्पर्श करैत अछि । अधिसंख्य गीत तँ एहन अछि जे ओ पहिने हृदयकेँ स्पर्श करैत अछि तखन मस्तिष्ककेँ । स्पर्शे टा नहि करैत अछि, गसि लैत अछि, दुनूकेँ गछाड़ि दैत अछि । ई असाधारण बात थिकैक । जे गीत भावनामे बहऽवला होइछ चिन्तनपक्ष ओकर ओतेक सबल महि होइत छैक सामान्यत: । आ, चिन्तनपक्ष जकर सबल होइछ, से भाव-पक्षमे दुर्बल । मुदा, 'मोहन'क गीत दुनू स्तरपर एक रंग बढ़ल-चढ़ल छनि । जेना एही गातांशकेँ देखल जा सकैछ —

आर्द्र मेघक घटा ई घहरि जाइ अछि
तन सिहरि जाइ अछि, मन लहरि जाइ अछि
क्यो जरा गेल छल, रुचि सेरा गेल छल
अग्नि-कण सन मरण-रस हेरा गेल छल
आततायी अपन अन्त अनलक स्वयं
आनकेँ जे जराओत, जरत से स्वयं
पूर्ण मद-मोद तरुपर झहरि जाइ अछि
प्रीति-आँचर लताकेर फहरि जाइ अछि

पाँती जेना-जेना पढ़ैत चलैत छी, हृदयक तंत्री ओही गतिमे झंकृत होइत जाइत अछि । हृदयक तंत्री झंकृत भेल कि मस्तिष्कमे विचार-प्रवाह दौड़ि गेल । विचार-लोकमे पहुँचितो ने लयकेँ पाछाँ छोड़ि सकैत छी आ ने लयक संग बहितो विचारकेँ छोड़ि सकैत

छी । मेघक घटा घहरिते शरीरो सिहरि जाइत अछि, मनो लहरि जाइत अछि :

पूर्ण मद-मोद तरुपर झहरि जाइ अछि
प्रीति-आँचर लताकेर फहरि जाइ अछि

एहि पदकेँ पढ़ैत काल पहिने ह्रदय डोलैत अछि कि मस्तिष्क—से निर्णय नहि कऽ पबैत छी ।

'रचनाक प्रति ईमानदारी' तथा 'भोगल यथार्थ'क प्रसंग हिनक विचारसँ अवगत भऽ चुकल छी । ई अपन काव्यमे ने कतहु ईमानदारीक ढोल पिटलनि अछि ने भोगल यथार्थक शहनाइ फुकलनि अछि । किन्तु, हिनक सम्पूर्ण काव्यमे ईमानदारीक कतहु कनियोँ खोँट नहि बूझि पड़त, समस्त गीत स्वानुभूतिक रसमे सराबोर लागत । एतऽ द्रष्टा कवि आ भोक्ता कविक विवाद ठाढ़ कयल जा सकैछ ।

हम ई नहि मानैत छी जे द्रष्टा कवि अविश्वसनीये होइत अछि, तहिना भोक्ता कवि सम्पूर्णत: सभ स्थितिमे स्वीकार्ये । देखब आ भोगब सामान्य प्रक्रिया थिकैक मनुष्य जीनवक । किन्तु, काव्य जीवनक सामान्य प्रक्रिया नहि थिकैक । महत्त्व एकर नहि छैक जे की देखल गेलैक अछि अथवा की भोगल गेलैक अछि, अपितु महत्त्व एकर छैक जे अपन अनुभवकेँ कवि कोन रूपमे, कतेक प्रभावी बनाकऽ, कतेक मर्मस्पर्शी बनाकऽ, कतेक वैचारिक ऊर्जा भरिकऽ, उपस्थित करैत अछि । 'मोहन'क कविता एहि कसौटीपर कतहु नकली नहि प्रमाणित होयत । हिनक एक कविता छनि 'विषम संसार', जकर एक अंश एना अछि :

रुधिरसँ रङि देह, रे दानव ! बनयँ कन्दर्प !
नि:स्व-दुर्गतिपर जमाबयँ रे प्रभुत्व-विसर्प !
ओह ! ई विष-दर्प !
मनुजकेँ देखऽ न चाहयँ अरे विषधर सर्प !

शोषक-शोषितकेँ लऽ सैकड़ो कविता रचल गेल अछि । एहि क्रूर विषमताकेँ कवि देखलक अछि अथवा स्वयं भोगलक अछि—ई ततबा अर्थ नहि रखैछ जतबा ई जे ओकरा कवि प्रस्तुत कोना कऽ रहल अछि । एहि 'कोना'क उत्तर ओकर अनुभूतिसँ बेसी ओकर प्रतिभापर निर्भर करैत छैक । मनुष्येक बीचसँ एक गोटे कन्दर्प (कामदेव) बनैत अछि, किन्तु ओकर सौन्दर्य दलित मानवक रक्तस्नानसँ निखरल छैक । फेर वैह कन्दर्प सर्प बनि जाइत अछि आ ओकरे डसि लैत अछि । स्वयं मनुष्य होइतो ओकरामे सापक धर्म आबि जाइत छैक आ ओ दूध पियौनिहारेकेँ मारि दैत अछि ।

किन्तु, क्रूरता-पशुताक आगाँ मृदुता-मानवता परास्त नहि भऽ सकैछ, शुरूमे भनहि परास्त होइत सन लागय । बरु डसि लौक, मुदा दूध पियौनिहारक महत्ताक परतर साप कहियो ने कऽ सकत, पालनकर्ताक स्थान संहारकसँ ऊपर रहबे करत । तहिना, कोइली आ कौआ, अस्तित्व तँ दुनूक रहैछ समाजमे । के थिक कौआ ?—

काक ओ, जे सर्वभक्षी पतित अछि

काक ओ, जे उचक्का जग-प्रथित अछि
काक ओ, जे उचङि लै अछि हाथसँ
काका ओ, जे केश नोचय माथसँ
कावँ-कावँ रटैत ई ठठतैक की
ओहि पिकसँ, जे स्वरक अवतार थिक ?
करकराइछ काक, कुहकय कोकिला
के कहत समुचित, ककर सहकार थिक ?

उक्त पंक्तिमे कवि प्रत्यक्षत: कर्कशतापर मधुरताक, क्रूरतापर मृदुताक श्रेष्ठता प्रतिपादित कयलनि अछि, किन्तु एहिमे लयहीन विसंवादी स्वरक पक्षपाती अराजकतावादीपर शान्ति-सौमनस्यक पंचम स्वर टेरनिहार निज संस्कृतिवादीक श्रेष्ठताक संकेत सेहो अछि ।

'मोहन' अपन काव्यकेँ 'नव' बनयबाक सायास चेष्टा नहि कयलनि, किन्तु हिनक कवितामे नवता अनायासे हुलकी मारैत भेटि जाइछ । पुरान पीढ़ीक अधिक कविकेँ नव युग भयावह लगैत छनि, एकर उत्थानसँ अपन अस्तित्वपर खतरा बुझाइत छनि, किन्तु हिनका कोनो खतरा, कोनो संकट नहि बूझि पड़ैत छनि । हृदय खोलिकऽ ई नवीन पीढ़ीक स्वागत करैत छथि

जयति नवगछुली समृद्धि-निधान शीतल
बढ़ि हरओ जन-ताप, फलसँ भरओ हीतल
गुणक सौरभ दिग्दिगन्त विकीर्ण होअओ
पाबि मधुऋतु लोक-जड़ता शीर्ण होअओ
पुरनका खसते, उठओ नवका जय-ध्वज
देखा देअओ अपन रूप विराट !

कतेक निश्छल स्वागत अछि । पुरनका समय, जाहिमे कवि अपनहुँ छथि, समाप्त भऽ रहल छैक, जल्दिए समाप्त भऽ जयतैक । ई गाछ आब बेसी दिन ठाढ़ रहनिहार नहि थिक । आब तँ नवगछुलिए बढ़त, ओहीपर उद्यानक शोभा निर्भर करत, ओकरे जय-ध्वज आकाशमे फहरत । अत: पुरानलोकनि अपन भाभट समटथु, नवका अपन विराट रूप संसार कें देखबओ । वास्तविकता तँ ई थिक जे नवको पीढ़ी जतऽ नवांकुरक (अपनासँ अनुजक) गुणगान करबासँ परहेज करैत भेटैछ, ततऽ 'मोहन' अपने मने, पूर्ण उत्साहसँ, भावी पीढ़ीक लेल सिंहासनकेँ खाली करबाक घोषणा करैत छथि ।

हिनक कविताक वैशिष्ट्यसभकेँ सुप्रसिद्ध आलोचक प्रोफेसर रमानाथझा एहि शब्दमे रेखांकित कयने छथि—

'उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन'क नाम ओहि कवि सभक संग अग्रगण्य अछि जे मैथिली काव्य-धारामे नवीन गीत-गरिमाक प्रतिष्ठापन कएल । मोहनजी फुलडालीमे मुख्यत: शृंगारिक कविताक संकलन कएने छलाह, किन्तु हिनक कविताक विषय-वस्तु शृंगारिके टा नहि रहल

अछि । ई विभिन्न वस्तु, विभिन्न भाव लए कविता लिखने छथि । एक दिसि यदि सामाजिक वैषम्य, दलित-पीड़ितक दीनता-विपन्नताक चित्रण कएल तँ दोसर दिसि समाजमे नवोद्भूत ओजस्वी चेतनाक सेहो चित्रण कएल । एहन रचना मुख्यत: बोधनात्मक अछि जाहि मध्य वर्णन भेल अछि युग-जीवनक तड़ित्तेजपूर्ण जागरण-भावनाक । जाहि-जाहि कवितामे आत्मानुभूतिक वैयक्तिक चित्रण भेल अछि, ताहि ठाम मोहनजी जीवनमे निहित शाश्वत नैराश्य एवं करुणाक चित्रण कएल अछि । किन्तु, 'मुरली' शीर्षक कवितामे कवि रहस्याह्वानक मधुर व्यंजना कएने छथि जाहिमे वर्णन तँ अछि रास-लीलाक किन्तु जाहिमे आत्मा-परमात्माक मधुर ओ रहस्य-सम्बन्धक स्थापना भेल अछि । भाषा-शिल्प शैलीक दृष्टिएँ मोहनजीक कवितामे गीत-काव्यक माधुर्य एवं प्रसादक दर्शन होइत अछि, उद्बोधनमूलक रचनामे ओजगुणक सम्यक् पुट सेहो अछि ।'

प्रोफेसर रमानाथझा 'मोहन'कें केवल नवीन गीतकारे नहि कहैत छथि, अपितु ओ हिनका 'नवीन गीत-गरिमा'क प्रतिष्ठापक मानैत छथि । वर्तमान युगमे गीतकें गरिमामय बनायब आ ओकरा प्रतिष्ठा देब बड़ समर्थ कविक सक थिकैक, जे सामर्थ्य 'मोहन' सिद्ध कऽ देलनि अछि । हिनक काव्य-परिधिक व्यापकताकें देखवैत ओ हिनक काव्यक विभिन्न दिशाकें सेहो दर्शौने छथि । हिनक काव्यमे युगक धड़कन भैटैछ, किएक तँ ई 'सामाजिक वैषम्य, दलित-पीड़ितक दीनता-विपन्नताक चित्रण' कयने छथि । ततबे नहि, ई 'नवोद्भूत ओजस्वी चेतना'क सेहो गायक छथि । चेतना केहन तँ ओजस्वी आ नवोद्भूत । अर्थात् हिनक काव्य जागरूक तँ अछिए जे ओहिमे उत्साह आ नवताक सत्कारक भाव सेहो विद्यमान छैक । एहि तथ्यक आर विश्लेषण करैत रमानाथझा कहैत छथि जे ई 'युग-जीवनक तडित्तेज'-पूर्ण जागरण-भावना'क गीतकार छथि । जगतमे जागरूकता सम्प्रति बिजलौका जकाँ एकबैग छिटकि जाइत अछि । ओहि विद्युतकें जे पूर्ण सावधान रहत सैह पकड़ि सकत, अन्यथा ओ लगले विलीन भऽ जायत ।'मोहन'क प्रतिभामे रमानाथझा ई क्षमता देखैत छथिन जे ओकरा ई पकड़िकऽ राखि सकलाह अछि ।

कविक जीवन संघर्षपूर्ण रहल अछि, जाहिमे हिनका अनगिनत कटु-मधु अनुभव प्राप्त भेलनि । मनुष्ये द्वारा मनुष्य कतेक आ कोना प्रताड़ित होइछ, तकरा ई विभिन्न रूपमे देखलनि आ अनुभव कयलनि, अनुभव कयलनि आ द्रवित भेलाह । एहन कविक जीवनमे निराशाकें स्थायी भाव भऽ जायब स्वाभाविक थिक । रमानाथझा हिनक काव्यमे निहित निराशाक स्वरकें एही पृष्ठभूमिमे देखलनि अछि । तँ ओ कहलनि अछि जे 'मोहन' जतऽ स्वानुभूतिक वर्णन करैत छथि ततऽ 'शाश्वत नैराश्य एवं करुणा' सघन भऽ गेलनि अछि । 'मोहन' आस्तिक छलाह । सभ कवि दार्शनिक होइत अछि । हिनको अपन दर्शन छलनि । लौकिक दर्शन ई छलनि जे मानवक पीड़ाकें, सभ भौंतिक पीड़ाकें, से प्रेमक कारणें हो वा अर्थक कारणें, आत्मसात् कऽ लैत छलाह आ तकरा कलात्मक गढ़नि दऽ सुभग मूर्तिक निर्माण कऽ लैत छलाह । प्रकृति-प्रदत्त सभ प्राणी ओ वस्तुमे सुन्दरताक अन्वेषण करब हिनक काव्य-दर्शन छलनि । पारलौकिक दर्शन सेहो छलनि । हिनक राधाकृष्णसँ सम्वद्ध पदसभ सहज

शृंगार नहि थिक, अपितु ओहिमे 'आत्मा-परमात्माक मधुर ओ रहस्य-सम्बन्धक स्थापना' भेल अछि । रमानाथझाक एहि उक्तिसँ ई निष्कर्ष बहार कयल जा सकैछ जे 'मोहन'क राधाकृष्ण विद्यापतिक राधाकृष्ण नहि, गोविन्ददासक राधाकृष्ण थिकथिन । से तँ थिकथिन, किन्तु हिनक शृंगार एतेक दूर धरि रहस्यात्मक नहि छनि जे तकरा 'भजन' कहल जा सकय ।

मैथिलीक आलोचकवर्गमे रमानाथझा आचार्य मानल जाइत छथि, भारतीय ओ पाश्चात्य दुनू शास्त्रक ओ मर्मज्ञ विद्वान् छलाह । तेँ, हुनक स्थापनाकेँ अधिक ठाम आदर-पूर्वक ग्रहण कयल जाइत अछि ।'मोहन'क प्रसंग हुनक ई मान्यता व्यक्त भेल अछि १९६५ मे, जखन ओ'नवीन गीत'क सम्पादन कयलनि ।किन्तु, ओ ओहिसँ पूर्वो तीन गोट काव्य-संग्रहक संपादन कयने छलाह—१९५६ मे 'कविता-कुसुम'क, १९४९ मे 'मैथिली साहित्य संग्रह पद्यांश'क, तथा १९४१ मे 'मैथिली पद्य संग्रह'क । ओहि तीनूमे सेहो 'मोहन'क कविताकेँ ओ शामिल कयने रहथि ।१९४१ सँ ६५ क बीच, ओहि पचीस वर्षमे 'मोहन'क आरंभिक गीत-संचयन 'फूलडाली' छोड़ि आन कोनो संग्रह नहि आयल छलनि,काव्य जे प्रकाशित भेल छलनि से पत्र-पत्रिके सभमे छिड़िआयल छलनि । किन्तु, ओ ततेक प्रभावोत्पादक छलनि जे तत्कालीन समालोचकगण बिनु आकर्षित भेने रहि नहि सकलाह । रमानाथझाक पारखी दृप्टि ओकरा देखलक आ विश्लेषित कयलक, सम्मान देलक । हमर तँ दृढ़ धारणा अछि जे 'बाजि उठल मुरली'क प्रकाशन-काल धरि जँ ओ जीवित रहितथि तँ हिनका आधुनिक गीतकारलोकनिमे सर्वश्रेष्ठ आसनपर विराजमान करितथि ।

बाजि उठल मुरली

यद्यपि सभ पोथीकेँ ओकर रचयितासँ आत्मिक सम्बन्ध रहितहिँ छैक, किन्तु पोथीक नामेसँ रचयिताक स्वरूप आ स्वभावक जेहन चित्र उभरैक से ओकरापर सटीक बैसि जाइक, एहन कदाचिते देखल जाइछ ।मुरली—ई शब्द सुनिते स्मृतिमे पहिल चित्र जे उभरैत अछि से मोहनेक होइत अछि ।मोहन आ मुरलीक बीच अन्योन्याश्रय सम्बन्ध छैक ।उपेन्द्र ठाकुर जहिया अपन उपनाम मोहन रखने होयताह, तहिया हुनक दृष्टिमे मुरलीधरक मोहक छवि अवश्य रहल होयतनि आ अपनाकेँ हुनका संग तादात्म्य कऽ लेने होयताह । ई कवि युवावस्थामे मुरली बजबैत छलाह कि नहि से तँ ज्ञात नहि, किन्तु मुरली-ध्वनि सुनिते गोपिकागण अपन काज-धन्धा छोड़ि-छाड़ि मोहन लग दौड़ि पड़ैत छलि—ई काल्पनिक स्मृति हिनका अवश्य मुग्ध कयने होयतनि आ रोमांटिक बनौने होयतनि । भऽ सकैछ, भावनाक स्तरपर से हिनको काम्य रहल हो ।ओ मोहन मुरली-ध्वनिमे जे सम्मोहन अनैत छल होयताह, किछु ओही प्रकारक सम्मोहन ई अपन काव्यगीतमे अनबाक अभिलाषी रहल होथि आ तँ संग्रहकेँ ओही रूपमे उपस्थित कयने होथि, इहो संभव थिक । एहि विश्लेषणमे हिनक प्रवृत्तिक झलक तँ अबिते अछि, कविक उच्चाभिलाषक संकेत सेहो भेटैत अछि आ आत्मविश्वासो प्रकट होइत अछि ।

प्रस्तुत संग्रहमे एक सय एक कविता संकलित अछि । हमरा जनैत, एहिसँ पूर्व विद्यापति आ चन्दाझाक गीतसंग्रहकेँ छोड़ि,कोनो कविक एक सय एक कविताक एकटा संग्रह नहि बहरायल छल । 'मधुप'क शतदलमे सेहो एक सय कविता अछि, किन्तु ओ एके फूलक सय टा पत्ती थिक । एहिमे तँ एक सय एक फूल अछि जे रंग-विरंगक अछि । वस्तुत: इहो संग्रह कविक फुलडालिए थिकनि ।

एकर शीर्षक-गीत 'बाजि उठल मुरली' मिथिला मिहिरक नवक्रमांक दू मे, १८ सितम्बर १९६०क अंकमे, भावचित्रक संग प्रकाशित भेल छल । ई हिनक अत्यधिक प्रिय कविता छलनि । मुरलीक तीन टा आर पर्यायवाची शब्द छैक—वंशी, वेणु आ बाँसुरी । कविकेँ ई वाद्य ततेक प्रिय छलनि जे एहि तीनू शब्दकेँ लऽ कऽ तीन टा कविता आर लिखलनि, जाहिमे दू शीर्षक गीत वंशी आ वेणु एहि संग्रहमे द्वितीय आ तृतीय संख्यक स्थानपर छनि । अर्थात्, पहिल तीन टा गीत मुरली, वंशी आ वेणुपर छनि । बाँसुरी शब्दपर एहि संग्रहक प्रकाशनक बाद गीत लिखलनि, सेहो पहिले रचनाक रूपमे प्रकाशित भेलनि वादक संग्रह 'इतिश्री' मे ।

'बँसुरिया डसि लेलक' यद्यपि इतिश्रीमे छपल, मुदा तकर दोष ओकर रचनाकालकेँ छैक, अन्यथा ओहो वस्तु थिक एही संग्रहक । कवि 'मोहन'क मुरली -प्रेमकेँ नीक जकाँ अनुभव करबाक हेतु एतऽ ओहि चारू कविताक आरम्भिक पंक्ति उद्‌धृत कयल जा रहल अछि :

मुरली — सखि हे संकेत-समय बाजि उठल मुरली !
वंशी — नाभि-कुण्डक ककर गह्वरित सुर कहरि सखि ! वंशी कहय !
वेणु — दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल....
बाँसुरी — दूर वनमे कतहु नाग ठनकल बँसुरिया डसि लेलक !

ततबे नहि, ई शब्दसभ हिनक आनो गीतमे अनायास आबि गेल अछि, यथा :

(क) रंध्र मुरलीक फूकय गमेसँ..
(ख) मुरलिक धुनि सुनिते
बुझाय क्यो अमृत कानमे सीँचय...
(ग) कदम तर हे, कहाँ झमकय मुरलिया...
(घ) बृन्दावन मलिन-मन्द वंशी-रव बन्द रे
(ङ) गोधूलिक ओ स्निग्ध वेणु-रव.....
(च) बँसुरिक सुर संकेत, नेत छै भाथि गेलै....

मनमोहनकेँ मुरली प्रिय छलनि तँ मुरली-वादनक लेल उपयुक्त स्थानो छलनि — यमुनाक तट आ कदम्बक गाछ । ओ मुरलीवादन गोपिका लोकनिक विरहाग्निकेँ पजारबामे सार्थक होइनि । कवि मोहन सेहो 'मुरली'सँ संग्रहक श्रीगणेश करैत यमुना आ कदम्बकेँ स्मरण कयलनि अछि आ तकर बाद गोपिकाक विरहाग्निक लहक सेहो देखौलनि अछि । एहि तरहेँ, पहिल आठ गोट गीत पोथीक शीर्षकक भावक अनुरूप अछि''।

एकर बाद प्रकृति-सम्बन्धी रचना अछि—ऋतुगीत, ऋतुकालक पर्वगीत एवं प्रात: अपराह्न संध्यादि समय ओ सरिता निर्झर समीर उद्यान-श्मशान प्रभृति स्थान-वर्णन अछि । युग-स्वर, समय-संकेत आ जीवन-संगीत अछि तँ उद्‌बोधन-उपदेश-अभियान गीत सेहो अछिं, दार्शनिक पृष्ठाधारित आत्मगीत अछि तँ देव-मातृ-स्तुति आ विद्यापति-स्मृतिपरक काव्यो अछि, मातृभाषाक उपेक्षाभावक प्रति चेतौनी अछि तँ अग्रिम पीढ़ीक संवर्धना-स्वर सेहो अछि । एकर अतिरिक्त, चौबालिस पृष्ठक, काव्यक प्रसंग विश्लेषणात्मक, विचारोत्तेजक, कवित्वमय भूमिका अछि ।

बाजि उठल मुरलीक समग्र रचना सुचयनित, सुनियोजित सुगठित आ सुपठित अछि ।

इतिश्री

'इतिश्री'क हेतु कविताक चयन तँ भेले नहि अछि । कविक जतेक कविता एक ठाम उपलब्ध भेल, तकरा बिना किछु कयने, जाही क्रममे ओ छल ताही क्रममे, असम्पादित रूपमे, छापि देल गेल । कविक एक टा सम्पूर्ण पोथी, जकर पाण्डुलिपि 'गीतनाद' नामसँ प्रकाशनार्थ तैयार कयने छलाह, भूमिका पर्यन्त लिखिकऽ राखि देने छलाह, एही 'इतिश्री'मे पचा देल गेल । से तेना पचा देल गेल जे ओकर अस्तित्व मेटा गेलैक । परिशिष्टमे जँ ओकर भूमिका नहि देल गेल रहितैक तँ क्यो से बुझबो नहि करैत ।

सूचीमे अस्सी गोट कविताक नाम लिखल अछि । एकसँ तिरपन क्रमसंख्या धरि विभिन्न गीत-मुक्तक अछि (जाहिमे एक कविता 'पुरस्कृत उचितवक्ता' शीर्षकमे किंचित परिवर्तनक संग, दोहराकऽ छपि गेल अछि ।) क्रमसंख्या चौबनसँ अस्सी धरि यद्यपि सत्ताइस गोट शीर्षक होइत अछि जे देल गेल अछि, किन्तु वास्तवमे रचना बासठि गोट अछि । चौबन क्रसंख्यक 'गीतनाद: भजनभाव'मे पचीस गोट तथा पचपन क्रमसंख्यक 'शरणागति'मे बारह गोट गीत अछि । एहि तरहेँ कुल योग बासठि भऽ जाइत अछि । एही बासठि गोट पदक एक फराक पोथी 'गीतनाद' नामसँ कवि छपबऽ चाहैत छलाह, जे इच्छा हिनक पूर्ण नहि भेलनि ।

ऊपरसँ तिरपन गोट (वास्तवमे बाबन गोट) काव्य विविध विषयक, विविध भावक, विविध छन्दक, विविध ढंगक अछि, जे स्तरक दृष्टिएँ हल्लुक तँ नहिएँ अछि, कतोक रचना बाजि उठल मुरलीक समकक्ष, ओहिसँ कनियो न्यून नहि, अछि । जाही वर्गक कवितासभ बाजि उठल मुरलीमे अछि, ओही सभ वर्गक कविता एहूमे अछि । एहन कोनो कविता एहिमे नहि अछि जाहि वर्गक बाजि उठल मुरलीमे नहि हो । तँ एहि संग्रहक कविताक लेल स्वतंत्र वर्गीकरणक आवश्यकता नहि बुझैत छी । हँ, गीतनाद अवश्य भिन्न वर्गक अछि, जकर फराकसँ विवेचन कयल जायत ।

बाजि उठल मुरलीक महत्त्व जेना ओकर भूमिका लऽ कऽ सेहो अछि तहिना इतिश्रीक महत्त्व एकर दुनू परिशिष्ट लऽ कऽ अछि । पहिल परिशिष्टमे 'किछु मूल्यवान स्मृति आ

प्रसंग' शीर्षकसँ कविक आत्माभिव्यक्ति अछि, जीवन-संघर्षक व्यथा-कथा अछि तथा गीतनादक भूमिका अछि । दोसर परिशिष्टमे कविक संस्कृत रचनाक किछु बनगी देल गेल अछि ।

एतऽ हिनक काव्यक मीमांसा पोथीक हिसाबसँ फराक-फराक नहि, रचना-प्रवृत्तिक दृष्टिएँ कयल जायत ।

कृष्ण, ताहूमे मुरलीधर कृष्ण-विषयक गीत भाव आ शिल्पक दृष्टिएँ बड़ उच्च कोटिक अछि । बाजि उठल मुरली शीर्षक गीतमे रास-लीलाक वर्णन अछि जाहिमे जीव-जन्तु चर-अचर सभ नाचि उठैत अछि । मुरलीक धुनि सभक चित्तकेँ खींचि रहल अछि :

घन-निकुंज सिहरि गेल
सुरभि-पुंज पसरि गेल
ज्ञान-ध्यान हहरि गेल
मनकेँ झिकझोरि रहल खींचि रहल मुरली !

कवि आश्चर्य प्रकट करैत छथि जे मुरलीसँ एहन सुमधुर ओ मादक ध्वनिक कोना वृष्टि भऽ रहल अछि, ककर अधरक आसव पिबि ओ उन्मादक सृष्टि कऽ रहल अछि, एहन उन्मादक जाहिमे :

उमड़ि पड़ल मधुक धार
बरसि रहल अमृत-सार
झमकि उठल प्रणय-तार
अधरासव पीवि ककर मातल ई मुरली !

एहि कविताक प्रसंग प्रो. रमानाथझाक विश्लेषण यथार्थ अछि जे 'कवि रहस्याह्वानक मधुर व्यंजना कएने छथि जाहिमे वर्णन तँ अछि रास-लीलाक किन्तु जाहिमे आत्मा-परमात्माक मधुर ओ रहस्य-सम्बन्धक स्थापना भेल अछि ।'

एही श्रेणीक काव्य वंशी-ध्वनि, वेणु रटिते रहल, बँसुरिया डँसि लेलक, यमुना-तीरक राग, कदम-तर के बिहँसय, हिन्दोलित पारावार हमर आदि सेहो अछि ।

'वंशी-ध्वनि'मे वंशीक धुनि सुनिते राधा लगले दौड़ि पड़ैत अछि, जेना :

चित्त चुम्बक कोनो घीचि रहले
सागरक प्रति सरित-वेग बढ़ले
स्थूल सम्बन्ध जगतक ससरले
ब्रह्म-लय-योग आत्माक जगले
गूढ़ इंगित जना के बजाबय ?
उताहुल विह्वल हृदय
दीप्ति-वर्षी तृषा के जगाबय,
प्रमुद-मद रागेँ भरय ?

एहि ठाम 'स्थूल सम्बन्ध जगतक ससरले, ब्रह्म लय-योग आत्माक जगलें' सन पाँती तथा 'गूढ़ इंगित जना के बजाबय' सन अंश लौकिक नहि रहि आत्मा-परमात्माक स्तरधरि, ओकर रहस्य-सम्बन्धक तह धरि, जाइत अछि ।

प्रवाह आ प्रसाद गुणसँ युक्त आवेगमय ई अंश द्रष्टव्य थिक जाहिमे सम्पूर्ण वातावरण जेना मनमोहन घनश्यामक तालपर थिरकि रहल हो । विरहिणी राधाक व्यथोमे जेना लास्य हो ! विरह-भावना हिनक गीतमे केहन रमणीय भऽ उठल अछि, से देखबायोग्य थिक :

श्याम-घन ओ घुमड़िते - झमकिते रहल
नूपुरक कंकणक ताल झुमिते रहल
आहि रे दैव, जन ई कहरिते रहल
दूर कतहु मदिर वेणु रटिते रहल

एवं

त्रास भरिते रहल, टीस बरिते रहल
क्वाथ मथिते रहल, माथ बथिते रहल
सुधि सुनगिते रहल, बुधि पजरिते रहल
दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल

कृष्णकें नागक संग तुलना करैत कवि केहन विलक्षण कल्पना कयलनि अछि ! चित्रकाव्यक ई नमूना देखल जा सकैछ :

ई केहन कृष्ण-नागक प्रभावे ?
मारि सिसकी, करय घोर घावे ?
दाढ़ नहि, पुनि किए बिक्ख पसरय ?
ढील देहो कि चैतन्य ससरय !
आँखि झपि जाय, तनि जाय नस-नस, बँसुरिया डँसि लेलक !

एक दिस रासलीलाक मिलन-बेलाक दुर्लभ संयोग-गान कवि गौलनि अछि तँ दोसर दिस हतभाग्या विरहदग्धा गोपिकाक वियोग-तान सेहो सुनौलनि अछि । ओहू विरह-वेदनामे कविक उच्च कला-साधनाक अनुरूप पद-योजना परिलक्षित होइछ :

हम हुनकासँ मधु मङइत छी, निज अश्रु पठा ओ देथि सजनि !
लिखि पठबै छी - 'प्रिय, आउ कने' ओ मेघ-दूत रचि देथि सजनि !
सखि, दुर्दिन मूसलधार हमर
उद्विग्न हृदय, रागिणी वि-लय, हत ऋचा, हँटल ओंकार हमर !

'मोहन'क प्रकृति-काव्य पढ़ैत-काल लगैत अछि जे कवि उत्फुल्ल प्रकृतिक कोरमे लऽ जाकऽ राखि दैत छथि—हम शिशु जकाँ किलकारी भरैत रहैत छी, प्रकृति माय जकाँ स्नेह-आवेसक वर्षा करैत रहैत अछि । विक्षणता ई जे ताहि लेल कवि अतीतमे नहि धकलैत छथि, वर्तमानेमे रहऽ दैत छथि :

झखरल-झरल जगक जीवनमे
नव तरंग लहरायल अछि रे !
प्रकृतिक साज-सिङार देखि
नव-नव उमंग बढ़िआयल अछि रे !
झनकि उठल अछि धमनी
मद-बिजुलीक यंत्र के दाबि रहल छै ?
आइ ककर के आबि रहल छै ?

कवि ऋतुवर्णनमे सेहो खूब रमल प्रतीत होइत छथि। वसन्त, वर्षा, शरद, हेमन्त ऋतुक मनोरम चित्रण ई ताहि दक्षतासँ कयलनि अछि जे गतानुगतिकतासँ मुक्त लगैछ, सुन्दर भावनालोकमे विचरण करबैछ — से शुद्ध कऽ ऋतु वर्णन हो अथवा ओ संयोग-वियोगक आलंवन हो। वसन्तक उमंगमे प्रकृतिक रंग आ मानव-मनक तरंगक संग कने बहल जाय :

वनमे भ्रमरक वीणा बजाय
मनमे मद-कलकलकेँ जगाय
जीवनमे नव स्पन्दन बहाय
कण-कणमे हँसइत अछि वसन्त

तहिना, वर्षाक प्राणीकरणमे आर्द्र मिलनक आनन्द लेल जाय —

किए रोमांचित कदम्बलता पहिरि पीताम्बरी नव
कंटकित अति हरित पट सजने किए केतकी नीरव
आइ श्याम-घनक प्रतीक्षामे सरस अभिसार केहन !
आइ मादक समय केहन !

ऋतुक आनुषंगिक पर्व जेना फगुआ आ दीयाबातीपर सेहो कविक ध्यान गेल छनि। किन्तु, ओहूमे ई निजत्वक छाप छोड़ने छथि। दीयाबातीक रातिमे लक्ष्मीपूजाक परम्परा अछि, किन्तु कवि तँ सरस्वतीक उपासक होइछ। लक्ष्मीक प्रति सरस्वतीपुत्रक भावनाकेँ ई एहि रूपेँ व्यक्त कयलनि अछि :

शुद्ध-सत्त्व सरस्वती छथि जनिक नित्य उपास्य
तम मलिन तोँ, तेँ रहथि से कवि तोहर उपहास्य
सम रही सुख-दु:खमे, तोँ रहह कृश वा पीन !

सरस्वती शुक्लवर्णा, लक्ष्मी मद-तम-मलिना, विद्वान्-स्थितिप्रज्ञ दीन, धनवान—खन कृश खन पीन। एतावता लक्ष्मीक साम्राज्योमे विद्वानक अस्मिताक रक्षा कवि कयने छथि।

किन्तु, एकर ई अर्थ नहि जे कवि भाग्यवादी बनल निश्चेष्टताक समर्थक छथि, अपितु पुरुषार्थक पक्ष लैत उद्यमशीलताक प्रेरणा दैत कहैत छथि —

सनठीसँ सूप डेङौने की, पौरुष उद्यममे श्रीक वास !
लड़ि रहल प्रकृतिसँ युग-युगसँ दुर्जेय मानवक दृढ़ प्रयास !

ऋतु-प्रकृति सम्बन्धी अन्यो रचना, जेना सरिते, निर्झर, मंजरी, मेघलोके..., शरद-यामिनी, उदय, प्रभात, गोधूलि-समय आदि महत्त्वपूर्ण अछि ।

कवि आत्मगीत वा जीवन-संगीतक प्रचुर रचना कयने छथि जे दुनू संग्रहमे पसरल अछि, जाहिमे कतहु उत्साह अछि तँ तकहु निराशो, कतहु सन्तोष अछि तँ कतहु दीनताक संतापो, कतहु जीवन-वैफल्यक प्रति चिन्ता अछि तँ कतहु ईश्वरक असीम करुणामे विश्वासो । दू पाटक बीचमे पड़ल व्यक्ति कोना अनिर्णयक स्थितिमे डोलैत रहैत अछि, से भाव एहि तरहेँ व्यक्त भेल अछि —

छह विरक्त आ की अनुरक्ते
चिन्तन-पथ ग्रन्थिले विभक्ते
की चाहै छह, से अव्यक्ते
अस्थिरता अविराम !

वयस ढरलापर, शक्ति क्षीण भेलापर मनुष्यक असहायताकेँ कवि एहि तरहेँ देखैत छथि :

कहिया ने पाँखिक बल खसलह
अथबल छह, आँखिक गति झरलह
ससरि-फसरि जीबह, द्युति भसलह
घिघरी आठो याम !

मनुष्यमे जखनो शक्ति-सामर्थ्य रहैत छैक, तखनो ओ ओकर उपयोग नहि करैत अछि, समयकेँ पकड़ि नहि बढ़ैत अछि आ अन्तमे निराशाक जीवन जीबालेल, 'ससरि—फसरि' जीबा लेल, 'घिघरी आठो याम' कटबा लेल, विवश होइत अछि । मनुष्यक समक्ष नीकसँ नीक क्षण अबैत छैक, ओकर मस्तिष्कमे नीकसँ नीक विचार जगैत छैक, समयक शिलापर नीकसँ नीक मूर्ति गढ़बाक उत्साह जमैत छैक, किन्तु ओ किछु कऽ नहि पबैत अछि, देखिते-देखिते समय ससरि जाइत छैक, पश्चात्ताप करबा-लेल स्मृति टा शेष रहि जाइत छैक :

दिन विवर्ण खसल, चलल खग उन्मन
नीड़ गान सुभग, मुखर तरु वन घन
मोड़ि नहि सकै छी हम
जोड़ि नहि पबै छी हम

जीवनक सांध्यबेलामे कविक शक्तिक्षीर्णता जन्य निराशा कोना मुखर भेल अछि, से देखल जाय :

आब नहि आमोद परिमल भोगि पायब
स्मृति मधुर अछि हृदयमे संयोगि गायब
कंटकक बेधन किए ने अन्त लगइछ
अरे दुर्दिन, किए ब्रणमे लवण पड़इछ
तेज-ऊर्जा आकिंचित्कर खसल-हारल
जीवनक ऊष्मा सेरायल जा रहल अछि !

वातावरणक विषमताकेँ हिनक कवितामे मार्मिक अभिव्यक्ति भेटलैक अछि :

स्वप्न छल जे घन-घटा नभमे सजत
अमृत बरिसत, प्राण पुलकित भऽ उठत
टिमटिमाइत जानि ने दीपो रहत
वास्तविकता जे निकट, से कर्ण-कटु
कल्पना दूरक सोहाओन ढोल अछि

डॉ. शैलेन्द्र मोहन झाक उक्ति जे 'मानवताक भावनाक विकास हिनक रचनामे पूर्ण रूपसँ भेल अछि ।संसारक विषम वातावरण हिनक द्रवणशील हृदयकेँ वड़ प्रभावित कयलक अछि आ दीन-दुखियाक करुण क्रन्दन हिनक कण्ठसँ कविताक धार बनि फुटि पड़ल अछि' एतऽ एकदम सटीक बुझि पड़ैत अछि ।

[illegible]-बोधक किछु श्रेष्ठ रचना थिक—शीतल ज्वाला, ज्योति-साधना, अस्ताचल दिस, जरल साँस, दृष्टिकोण, पथ-जिज्ञासा, असमंजस प्रभृति ।

हिनक कवितामे युगक भास्वर स्वर प्रकट भेल अछि । एहि कोटिक नव युग, उठओ नवका ध्वज, युवक वीर, जोआनी, चिनगी उगिलत चन्दन, बलवान काल, त्रिशंकु जनजीवन प्रभृति अनेक कविता अछि । एहिमे किछु उत्साहसँ भरल, नवीन रक्तक हुंकारक सत्कार करैत अछि तँ किछु एहनो अछि जे समाजक विषमताकेँ, मनुष्यक क्षुद्रताकेँ देखार करैत अछि । कवि समाजकेँ बहुत सूक्ष्मतासँ निरीक्षण कयने छलाह, स्वयं संघर्षक आबामे तपिकऽ कुंदन बनल छलाह, मनुष्यक संकल्प-शक्तिक प्रतीक छलाह, तँ संघर्षकेँ ई जीवन मानैत छलाह । मानवक असीम शक्तिमे हिनका आस्था छलनि, ओकर उज्ज्वल भविष्यपर विश्वास छलनि । एकर अछैत, एतेक आस्थावान कविक मुहेँ कतहु-कतहु निराशाक स्वर सेहो सुनाइ पड़ैत अछि । तकर की कारण ?

कारण भऽ सकैत अछि हिनक व्यक्तिगत जीवनमे योग्यता अछैतो उपयुक्त पदप्राप्तिमे विफलता, हिनकासँ हीन योग्यतावलाक भौतिक जीवनमे सफलता । एहि विफलताक झलक आ ताहि पाछाँ स्वार्थी तत्त्वक आक्रामक तेवर, हिनक पदमे भेटैत अछि, किन्तु एकर केवल झलक भेटैत अछि, वास्तविकतासँ साक्षात्कार मात्र उद्देश्य अछि, कविक हताशा आ जन-समाजक प्रति आक्रोश आ विद्रोह नहि । ई भाव ओहने कवितामे आयल अछि जाहिमे कविक जीवन चित्रित भेल अछि, जेना :

अरे फेकल फूल छी हम !
भुवन-वनमे झरल मुरझल पद-दलित मृदु फूल छी हम !
हमर जीवनमे विघाती जग विषम विष घोरि देलक
सरस सुरभित नवल दलकेँ दबानलमे बोरि देलक
लोक-कण्ठक वास-वंचित अशिव शिव-निर्माल्य छी हम !
एक दिस जग घृणा-धूलिक करय प्रक्षेपण अहिर्निश
हँ, प्रलोभन-रंग-रंजित प्रेम-फुचकारी अपर दिस
अछवि-मंजुल, मलिन उज्ज्वल दु-रुक्खा तस्वीर छी हम !

ई स्वाभाविको छल । किन्तु, जतऽ कवि समाजक आह्वान कयलनि अछि, मनुष्यक विराट शक्तिपर आस्था देखौलनि अछि, परिवर्तनक प्रेरणा देलनि अछि, ताहि ठाम अपन व्यक्तिगत पीड़ाकेँ नहि अनलनि अछि । मानवक अजेय शक्ति दिस इंगित करैत, अनेक प्रतिरोधी तत्त्वकेँ टारैत-नकारैत, लक्ष्य धरि पहुँचबाक आह्वान कयलनि अछि :

अन्हड़-बिहाड़ि उमड़ओ हजार
हम रहब पहाड़क सदृश ठाढ़
पाथर बरिसओ, ठनका ठनकओ
नहिं टारि सकत क्यो ध्येय गाढ़
कुज्झटिका लऽ जड़तम तुषार —
झहरओ, नहि सिहरत कने देह
धरती जरि धीपओ तबक तुल्य
टूटत तैयो नहि गतिक स्नेह
गन्तव्य स्थल जयबा धरि हम
चलिते जायब दुर्दम समीर !

वाधाक पहाड़केँ ढाही मारि उखाड़िकऽ फेकि देबाक ललकारा दैत छथि :

ढाहल ढाही मारि, उखारल हम पहाड़केँ लड़ि-लड़ि अड़ि अड़ि
दाहक दीपक ज्योति मिझाओल, हम फनिगा भऽ जरि-जरि मरि-मरि
बालुक पाँतरसँ फल्गूमे
स्रोत फूटि विप्लव रचैत अछि
नव युग काल करौट लैत अछि !

शान्तिप्रियो व्यक्ति प्रताड़ित भेलाउत्तर विद्रोह-भावसँ भरि जाइत अछि, चाननोकेँ रगड़लासँ चिनगी छिटकऽ लगैत छैक । एहि युगसत्यकेँ अपन समाजक अस्मितासँ कवि जोड़ि देलनि अछि :

सोझ आङुरे घी भेटत, से आजुक युग नहि
शान्तिक अपमाने होइछ क्रान्तिक पद-वन्दन
सेतु-बन्ध ले' तेज-ओज संलग्न जकर छै
लंका धाङत सैह, करत मैथिली-विमोचन

युवारक्तकेँ ललकारैत, ओकर पौरुषकेँ जगाकऽ जवानीक जोशकेँ उचित लक्ष्य दिस कवि एना मोड़ैत छथि :

अपन उचित अधिकार छोड़ि, अति शान्ति-जाप थिक पापे
'स्वत्व-हेतु संघर्ष करय चिनगी बनि, सैह जोआनी !
समतलमे सभ सहजेँ चलइछ, एहन चलब की पौरुष
बाट बनाबय काटि काँट-कुश, बलगर-हठी जोआनी !

अपन एक दोसर कवितामे कवि जवानीक तीन रूपसँ परिचय करबैत छथि :

कृष्णपक्ष, शुक्लपक्ष तथा सन्तुलन । जवानीक कृष्णपक्ष की थिक ?

जोआनी वर्षा-नदी उदाम
नाँघि सीमा, भसबय तट-गाम
करय जलकेँ कडुआह-अपेय
मूर्ति-भंजन टा झोँकक ध्येय
जोआनी लहलह विषधर क्रूर
तानि फण डँसय, खेहारय दूर
चढ़बियौ कतबो लाबा-दूध
प्रकृति छोड़य नहि, ई नहि सूध

आब एकर शुक्लपक्ष देखल जाय :

जोआनी सौरभमय मधुवात
भरय अगजगमे स्फुरणक बात
शील—विनयक ई शुचि आधार
अधीती सुविवेकी संस्कार
जोआनी साधल अर्जुन-तीर
माछ ध्रुव बेधय तकितो नीर
अपन उपलब्धिक बात-विचार
माय-भायक रुचिरस-सत्कार

एहि दुनूक सन्तुलन करैत कवि आदर्श जवानीक परिभाषा दैत छथि—

जोआनी नहि दावानल दाह
जोआनी नहि नपुंसकक धांह
जोआनी नहि जड़ शुद्धे बुद्ध
जोआनी नहि बल दूसि कुयुद्ध
जोआनी दूर दृष्टि शुचि गहत
जोआनी बाट—पाट धऽ बहत
जोआनी किए बन्ध अभिशाप
जोआनी थिक वर दिव्य अपाप

डा. रमानन्द झा 'रमण'क ई उक्ति अक्षरश: सत्य अछि जे 'मोहनजीक व्यवहारेमे नहि, कवितोमे नवकाकेँ उत्साहित करबाक भाव अछि । नवका पीढ़ीक क्षमतामे हुनका पर्याप्त आस्था छलनि, ओ बढ़ओ से सदिखन चेष्टा रहैत छलनि । एही प्रवाहमे कविक 'उठओ नवका ध्वज' गीत अछि । कविकेँ विश्वास छनि जे झरल-झखरल गाछ आ उसरल हाटकेँ पटौने वा तकैत रहने कोनो लाभ नहि छैक :

गाछ ई जे फेर पल्लवसँ सजत नहि
मदिर मधुमय महमही महिमा भरत नहि

मज्जरक छवि-छटा स्वर्णिम नहि उमड़तै
मंडपादित सघन शाखा नहि चतरतै
बज्रलेपी तुलायल पतझार से, जँ
कोकिला-कुल उड़ल पाबि उचाट !

तँ, आवश्यक जे नवगछुलीकेँ पटाबी, प्रोत्साहन दी आ फलक कामना करी :

जयति नवगछुली समृद्धि निधान शीतल
बढ़ि हरओ जनताप, फलसँ भरओ हीतल !'

कवि अपन भाषा-संस्कृतिक प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति प्रदर्शित कयने छथि आ ओकर उद्धारक हेतु समाजक आवाहन कयने छथि । कवि मातृभाषाक वर्तमान दुर्दशापर व्यथित छलाह आ एकरा लेल सकल समाजक चेतनाहीनताकेँ दोष-भागी बुझैत छलाह । स्वभाषाक सम्मानकेँ मनुष्यक स्वाभिमानसँ जोड़ैत कवि कहैत छथि -

से मनुक्ख थिक जकरा युग-बोधक प्रतिभा छै
स्वत्व-अर्जनक हेतु जकर संलग्न विभा छै
भाषा-संस्कृतिकेँ जे क्यो प्राणोपम मानय
देश-समाजक हित-क्षतिकेँ जे निज कऽ जानय
अपन देश-कोसक मनुक्ख से, से यश पाओत
मैथिलीक अधिकार-युद्धकेँ जे सुढ़ियाओत

तँ, मिथिलावासीक आत्माकेँ एहि शब्दमे झिकझोरलनि अछि :

जखन मैथिली सूपक भाँटा भेल संकटापन्न
की राष्ट्रियता ? देशभक्ति की ? के गौरव-सम्पन्न ?
तै प्रबुद्ध योद्धासँ रहते की दृढ़ देशक मान
जकर खेतपर आने हर फेरय, टपि आरि-सिमान ?

वस्तुतः मैथिलीक खेतपर आने आबिकऽ हर चला रहल अछि । वर्तमानमे वस्तुस्थिति यैह अछि जे :

कुटिल राजनय नित धकियौलक
शालीनता अपन भसियौलक
पटरानी आने बनि बैसलि
अधिकारिणी विदूर उपेखलि
अनवधानकेँ भाग न भेटय
तकरे समुदाहरण मैथिली !

मैथिलीक वनवासक एहि विकट समयमे हुनक रक्षाक लेल हनुमानी शक्तिक प्रयोजनकेँ रेखांकित करैत कवि कहैत छथि :

शक्ति अरजल भेल नहि वज्रांग—वीरक
भरोसब की मैथिलीकेँ, बाट दुर्गम !

कवि समाजकेँ दुर्गम बाटपर बढ़बाक ललकारे टा नहि दैत छथि, अपितु हार्दिकताक संग बौद्धिक ऊर्जा सेहो भरैत छथि ।

सूक्ति

सूक्ति-सुभाषितक रचना करबामे कवि सिद्धहस्त छलाह । सूक्ति लिखब उच्च प्रतिभेक सक थिकैक, कारण केवल चारि सीमित पाँतीमे कोनो हित-उपदेश प्रेरणा-संदेश आकर्षक रूपमे प्रस्तुत कऽ देब सामान्य विषय नहि थिक । जे अनुभव-सिद्ध आ कलम-सिद्ध दुनू अछि सैह उच्च कोटिक सुभाषितक रचना कऽ सकैत अछि । कवि 'मोहन' एहिमे अपन दक्षता देखौने छथि ।

मिथिला मिहिरक प्रत्येक अंकमे सम्पादकीय पृष्ठक ऊपर कोनो सूक्ति-सुभाषित देबाक परम्परा छलैक । पहिने ई सूक्ति संस्कृतमे रहैत छलैक । फेर मैथिलीमे आरम्भ भेलैक । किछु अंकमे कविवर सीताराम झाक सूक्ति देल गेलनि । तकर बाद 'मोहन' अपन सूक्ति देबऽ लगलथिन । २६ जनवरी १९७५ अंकसँ हिनक सूक्ति जाय लगलनि । पहिने अनाम आ ४ मइ १९७५ क अंकसँ नामपूर्वक । ई क्रम ५ सितम्बर १९८२ धरि चलैत रहलनि । बीचमे अवकाशो प्राप्त कऽ लेलनि आ संसारो छोड़ि देलनि । मुदा, एक्के बेर बहुत लिखिकऽ मिहिरमे छोड़ि आयल रहथि, जे ओतबा दिन धरि अबैत रहलनि । बीचक एकाध अंक मात्र अपवाद भऽ सकैत अछि । ओहि अवधिकेँ जोड़लासँ ३९७ सप्ताह होइत छैक, ताहिमे बेसी-सँ-बेसी नौ सप्ताहकेँ कम कऽ देबैक तैयो हिनक ३९० टा सूक्ति अवश्य मिहिरमे प्रकाशित अछि । ओकर अतिरिक्त दू सय सूक्ति इतिश्रीमे 'कर्म—धर्म' शीर्षकक अन्तर्गत आयल अछि । वास्तवमे सूक्ति तँ आदर्श कर्म आ धर्म दिस प्रेरित करबे लेल होइत अछि । किछुमे संस्कृतक छाया देखल जा सकैछ । एतऽ केवल दू टा सूक्ति दृष्टान्त-लेल प्रस्तुत कयल जा रहल अछि :

अप्रकाश आ अज्ञानक जँ जगमे जमत प्रशस्ति
आसुर भाव बढ़त, मचि जायत घात-मृत्यु-अस्वस्ति
बाघ साप थिक एक निन्द्य ? छै बल हिंसक दुस्तत्वे
तँ ओ सैंतल-मारल जाइछ वन्दनीय शिवि-सत्वे

एवं

राजनीति थिक बड़ पुरान, सभ दिन चललै अछि
एकर प्रसादेँ कते उठल, बड़ बड़ धँसलै अछि
तरहत्थीक आगि ई, शीतल जोगे—टोने
जोग—टोन हुसि जाइ, जरय, उड़ि जाइक सोने

गीतनाद

कवि एकर पाण्डुलिपि तैयार कयने छलाह, किन्तु छपि नहि सकलनि, जकरा इतिश्रीमे समाहित कऽ लेल गेलैक । ओहिमे बासठि गोट पद छलैक, जकरा कवि तीन खण्डमे विभक्त कयने छलाह । कृष्णखण्डमे पचीस गोट, कालीखण्डमे सोरह गोट आ अन्तिम प्रकीर्ण

खण्डमे एकैस गोट विभिन्न भावक गीत छनि जाहिमे किछु शिव गणेश दुर्गा गोसाउनि आदि देवभावक छनि तँ किछु आत्मपरक आ प्रकृतिपरक छनि, तहिना एक गीतक शीर्षक छनि मधुबाला तँ एक गीतक युवक-वीर । एहि खण्डक किछु कविता जेना वसन्त, ककर की मोल अछि, अपराह्न, युवक-वीर प्रभृति बाजि उठल मुरलीमे सेहो संगृहीत अछि ।

एकर भाव-भूमिक प्रसंग कविक उक्ति छनि जे—'गीतनादमे सगुण आ निर्गुण दुहू प्रकारक वस्तु अछि । सगुण-उपासनोमे एकेश्वरवाद आ बहुदेवतावादक दुबटिया पद्धति । भक्तिपद दूहू पक्षक अछिये, साधको दुहू पक्षक छथिहे ।....गीतनादमे कतहु शृंगारी पदो अछि तँ कतहु निरामिष । शृंगारी पदो-शृंगारक उत्तेजनकेँ लक्ष्य कऽ नहि ग्राह्य, अपितु भक्तियेसँ । के कोन रूपमे ओहि पदकेँ ग्रहण करैछ से ओकर संस्कारपर निर्भर । .....गीतनाद चलैत रहइत अछि, युगान्त धरि चलिते रहत । साधारण जन-जीवनकेँ ई बाट बड़ प्रिय, आनन्द लेल वा भक्तिक संवर्धना-लेल । इएह कारण जे भक्त-साधक लोकनि गीत-नादमे उपयोग लेल भक्तिपद लिखैत रहलाह अछि—लिखिते रहताह । जन-समाजो ओकरा ग्रहण करैत रहल अछि—करिते रहत । निश्चयत: भक्तिपद लिखबाक प्रेरणा स्रोत पावन चिन्तने भऽ सकैत अछि, आस्तिक लोके ई लिखत आ तेहने लोक एकरा अपनाओत ।'

शान्ति-पद (जगतसँ) किछु अंश द्रष्टव्य थिक जाहिमे कविक नैराश्य भावना ओ संन्यस्त कामना व्यक्त भेल अछि :

जन्म-मरणपर हर्ष शोक की
सुख-दु:खक आह्वान रोक की
किछु सुस्थिर नहि, सुदृढ़ फाँक की
मंजर—पतझड़ प्रकृति रीति रे ! मन नहि व्यर्थ ममोड़ ।
स्त्री सन्तान भाइ ओ बान्धव
सवतरि केवल स्वार्थक ताण्डव
केओ ककरो नहि, कृत्रिम मांजव
ताँ सत्‌चित आनन्द जाग रे ! मोह सुरा घट फोड़ ।

एतऽ विद्यापतिक पद 'तातल सैकत वारि विन्दु सम सुतमितरमनि समाजे' मन पड़ि जाइत अछि ।

अन्तमे उद्‌धृत करैत छी युवक-वीरक निम्नांकित पंक्ति जकरा कविवर 'मोहन'क काव्यसाधनाक उद्‌देश्यक रूपमे, नवपीढ़ीक हेतु संदेशक रूपमे, सेहो देखल जा सकैत अछि :

देशक अभिलाषक हमहिँ केन्द्र, करबाक पड़ल अछि कते काज
साहित्य विपद्‌गत हन्त आइ, पतनोन्मुख अछि दुर्गत समाज
रे जन्मभूमि जननीक नोर
पोँछत के हमरा बिना वीर ?

गद्य

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन' जतबा कविता लिखलनि ताहिसँ कत गुण अधिक गद्य लिखलनि । मुदा, 'मोहन'क जतबा कविता उपलब्ध अछि तकर आधक आधो गद्य नहि भेटत । ई विरोधाभास एहि हेतु अछि जे कविता जतऽ आ जतेक छनि से अपन नामसँ छनि । गद्य जतऽ आ जतेक छनि से कोनो प्राय: अपन ज्ञात नामसँ नहि छनि । 'प्राय:' एहि लेल कहलहुँ अछि जे हिनक दुनू टा काव्य-संग्रहमे गद्यो छनि—एकमे भूमिका-रूपमे, दोसरमे परिशिष्ट-रूपमे । भूमिकाक चौबालिस पृष्ठ आ परिशिष्टक चौदह पृष्ठकेँ जोड़ला उत्तर अठाबन पृष्ठ गद्य होइत अछि जे हिनक अपन नामसँ छपल छनि । एकर अतिरिक्त, हिनक अपन नामसँ गद्य, जहाँ धरि मन पाड़ि अबैत छी, एकाध स्थलकेँ छोड़ि, नहि भेटैत अछि । किन्तु, हिनक जीविका-अवधिक मिथिला मिहिरक अधिकाधिक अंकमे हिनक गद्य कोनो-ने-कोनो रूपमे पसरल छनि—प्रारंभिक पृष्ठसँ लऽ कऽ अन्तिम पृष्ठ धरि । ओहि अवधिमे देश-विदेशक राजनीतिक सामाजिक धार्मिक आर्थिक औद्योगिक शान्ति-अशान्तिमय सुघटना-दुर्घटनासँ ई निरन्तर अवगत होइत रहलाह तथा ओहिपर अपन प्रतिक्रिया लगले व्यक्त करैत रहलाह । मूलत: संस्कृत पण्डित होइत, परम्परागत आचार-संस्कारसँ घेरल-बेढ़ल रहैत हिनक जिज्ञासु मन निरन्तर नित नव-नव वस्तुक सन्धानमे रुचि लैत रहल ।

मिहिर कार्यालयमे कार्य-अवधिमे प्रतिदिन ई लिखबे करथि । समाचारपत्र पढ़थि आ तात्कालिक गतिविधिपर अपन टिप्पणी लिखिकऽ राखि देथि । ओहिमेसँ किछु आवश्यकतानुसार, पृष्ठपूर्ति-लेल, प्रेसकेँ दऽ देथिन, शेष पड़ले रहि जाइनि आ अन्तमे नष्ट भऽ जाइनि । साहित्यिक-सांस्कृतिक विषयक लेख दू-चारि सप्ताह धरि पड़लो रहि जाइनि तँ तकर बादो उपयोग करथि, कारण ओकर विषय तात्कालिक होइतो क्षणजीवी नहि रहैत छलैक । साहित्यिक-सांस्कृतिक अथवा महत्त्वपूर्ण राजनीतिविषयक सामग्री बहुधा निबन्ध-रूपमे प्रधान स्थानपर छपल करनि, क्षणस्थायी सामग्री स्तम्भमे वा गौण स्थानपर जाइनि ।

किन्तु, कोनो सामग्री अपन नामसँ नहि जाइनि । एहि लेल किछु छद्मनाम रखने रहथि, जेना — विजयानन्द, कुंजरंजन, सुदर्शन, पुण्डरीक, वामन शास्त्री, काश्यप, ठाकुर, उपेन्द्र मोहन ठाकुर । ९१९ सकैछ किछु आर छद्मनाम होइनि । किन्तु, ओसभ आब अज्ञाते रहि जयतनि ।

कथा, संस्मरण, एकांकी-नाटक वा यात्रासाहित्य ई नहि लिखलनि, पुस्तक-समीक्षो नहि लिखलनि, आलोचनो नहि लिखलनि, केवल निबन्ध लिखलनि, टिप्पणी लिखलनि, साहित्यिक वा समकालिक गतिविधिपर अपन दृष्टिकोण आ सुझाव प्रस्तुत कयलनि ।

'मोहन'क रचनात्मक व्यक्तित्वक दू रूप छलनि—साहित्यकारक आ पत्रकारक । साहित्यकार मोहनक हिस्सामे कविता पड़लनि आ पत्रकार मोहनक हिस्सामे गद्य । दुनू फराक-फारक छलनि ।

किन्तु, साहित्यकार आ पत्रकार भिन्न रहितो एक-दोसराक पूरक थिक । जतेक श्रेष्ठ साहित्यकार भेलाह, प्राय: बेसी गोटे पत्रकारो रहबे कयलाह । तहिना, विख्यात पत्रकारो साहित्यकार छलाहे । ई सिलसिला आइयो अछि आ आगुओ रहत । जागरूकता, दृष्टिसम्पन्नता, सामयिकता आ लक्ष्यक प्रति सावधानता श्रेष्ठ साहित्यकार आ श्रेष्ठ पत्रकार दुनूक लेल आवश्यक शर्त थिक ।

'मोहन' पत्रकारो छलाह, तेँ हिनक काव्यमे उक्त तत्त्वसभ विद्यमान छनि, ई साहित्यकारो छलाह, तेँ हिनक पत्रकारितोपयुक्त गद्योमे भाषाक लालित्य आ साहित्यिकता अनुवर्तमान छनि ।

जाहि कालखण्डमे ई साहित्याचार्य कयलनि, तहियाक पण्डित लोकनि आलंकारिक, लच्छेदार आ क्लिष्ट भाषा लिखबेमे अपन पाण्डित्यक प्रदर्शन करैत छलाह । हुनक धारणा छलनि जे सोझसाझ भाषा तँ सभ लिखि सकैत अछि, ओहिमे वैशिष्ट्य की, विदूत्ता की ? विद्वत्ता तँ ताहिमे छैक जे केवल पण्डिते लिखि सकय, पण्डिते बूझि सकय । साहित्यकारक धारणा एहिसँ भिन्न छलनि । ओसभ एहन भाषाक पक्षमे छलाह जे सभकेँ बुझबा-जोग भऽ सकैक, सभकेँ होइक जे ओहन ओहो लिखि सकैत अछि । ई सोच ओहने व्यक्ति विकसित कयलनि जे स्वयं पत्रो चलबैत छलाह । तँ, जनाकांक्षाक हुनका साक्षात् बोध भेलनि ।

किन्तु, सोझ भाषाक अर्थ फलकल भाषा कथमपि नहि थिक । भाषा सोझो हो आ कसलो हो, ओहिमे प्रवाहो हो आ रोचकतो हो, विचार स्पष्टो हो आ बन्हलो हो—एहन लिखनिहार संस्कृत पण्डितमे ताहि दिन आङुरेपर गनल छलाह । 'मोहन' ताहिमे अग्रगण्य छलाह ।

हिनक विचार ने कतहु भाषापर हाबी भेल अछि आ ने भाषा विचारपर । ई जाहि विषयकेँ जेना प्रस्तुत करऽ चाहैत छलाह, ठीक ताहिना कऽ दैत छलाह, ओहिमे भाषा कतहुसँ कनियोँ बाधक नहि बनैत छलनि । भाषाक कारणेँ अपन भावाभिव्यक्तिमे कनियोँ तोड़-मरोड़ कयने होथि, से नहि लगैत अछि । किन्तु, विचार जे ई व्यक्त करैत छलाह, से कतहु नीरस—उसट्ठ नहि भेलनि, आदिसँ अन्त धरि आकर्षक बनल रहि गेलनि, से जादू हिनक भाषाक छलनि । हिनक भाषा कवित्वपूर्ण तँ अछि, रहस्यपूर्ण नहि अछि ।

हिनक गद्य व्याख्यात्मक नहि, सूत्रात्मक होइछ । बहुत पाँती एहन भेटत जाहिमे दू-तीन पाँतीक बातकेँ एकमे समटि देल गेल अछि, मुदा वाक्य ताहि कारणेँ पैघ नहि भेल अछि,

जटिल नहि भेल अछि । क्रियापद सभ वाक्यमे देब ई जरूरी नहि बुझैत छलाह, तेँ हिनक वाक्य कतोक ठाम वाक्यखण्ड जकाँ लगैत अछि, सूत्रक आभास दैत अछि । ओ व्याख्येय तँ रहैछ, मुदा ओहिमे कोनो ग्रन्थि नहि रहैत छैक । हिनक एहि वैशिष्ट्यकेँ निम्नांकित अंशमे देखल जा सकैछ—

"कवि माने प्रस्फुटित पुष्प, जतऽसँ पराग झरय आ मकरन्द सरबय । कवि माने उदित इन्दु, जतऽसँ मादक ज्योत्स्ना पसरय आ आह्लाद बरिसय । कवि माने स्वच्छ निर्झर, जतऽसँ निर्मल सलिल स्रोत बहय आ झहर-झहर संगीत-सुर निनादित होइत रहय ।

कविता माने कविक जीवन-जगतक दर्शनरूपी तड़िपत पोथी । कविता माने कविक आचार-विचारक चित्रित मूर्त-रूप, चिन्तन-मननक यथातथ्य बिम्ब-प्रतीक । कविता माने कविक व्यक्तित्व-कृतित्वक निचोड़ । कविता माने कविक भावना-अनुभूतिक सप्राण प्रतिभा । कविता माने कविक प्रतिभा-मेधाक सार पदार्थ—नेनु । कविता माने सृष्टिक समस्त सौन्दर्यराशिक आकलित-संचित केन्द्र-विन्दु ।"

गूढ़ो विषयकेँ ई ततेक सहज ढंगे प्रस्तुत करैत छथि जे पाठककेँ हिनक विचार खचित होइत चलैत छैक । ओकरा कतहु अँटकऽ नहि पड़ैत छैक । अपन मूल विचारक पुष्टि लेल बीच-बीचमे दृष्टान्त दैत चलैत छथि, जे विषयकेँ आर रोचक बना दैत अछि—कतहु चेफरी सन नहि लगैत छैक । सहजात काव्य-प्रतिभा एवं सायास कविता-लेखनमे अन्तरकेँ कोना ई स्पष्ट कयलनि अछि, ततेक स्वाभाविक ढंगे जे केहनो व्यक्ति दूनूमे भेद बुझि जा सकैत अछि, बिना मस्तिष्कपर कनेको दवाब देने, से द्रष्टक थिक —

'कवि लिखैत अछि, अपन कोनो क्षण-विशेषक देखल-सुनल-भोगल घटनाक प्रभावक आवेगमे, उन्मादमे, दर्दमे । ओकरा तखन अपन भाव-धाराकेँ रूपायित करऽ पड़ैत छैक, ओ ओकरा कोनहुना टारि नहि सकैत अछि । मन-रोग भऽ जयतैक । दिव्य शक्तिक बलेँ प्राप्त बिजलीक चमक जकाँ कदाचिते उदित भेनिहारि प्रतिभाक वरदान व्यर्थ भऽ जयतैक । ओ छिटकल किरण बिला जयतैक । ई भेल यथार्थ कविक सम्बन्धक गप्प । एकर विपरीत, जे क्यो नियारि भासिकऽ लिखऽ बैसैत अछि, आ ओकर मन-मस्तिष्कमे क्रमबद्ध भावधारा सुस्थिर नहि छैक तँ जेना-तेना किछु लिखि लेअय, मुदा क्षीण-भासी प्रतिभाक ओज-तेज ओहिमे रूप-आकार ग्रहण कैये लेतैक—ताहिमे पूर्ण संशय । ओहन रचना बिनु भूखेँ खायल अन्न जकाँ अनपचक रूपमे वमन-विरेचने-सन बेकार ।'

अपन प्रारम्भिक जीवन-संघर्षक वर्णन करैत एक रोचक रहस्योद्घाटन करबाक क्रममे ई भाषाक कलाकारिता देखा देलनि अछि । विषयो स्पष्ट भऽ जाइक, मर्यादो रहि जाइनि, रोचकतो बनल रहैक, सत्योक रक्षा भऽ जाइक—गद्य एहन सुष्ठु जेना कोनो कथा हो । द्रष्टव्य ई अंश —

'सेठक सुपुत्री संस्कृत छँटैत अनेक प्रश्न कयलक । तत्काल संस्कृतमे गद्य-पद्य लिखबौलक, साहित्य-दर्पण अभिज्ञान शाकुन्तलम् पढ़ाबऽ कहलक । जँचि गेलिऐक, बहाल कऽ लेल गेलहुँ । बड़ संकट उपस्थित भेल तखन, जखन ओ 'अधर: किसलय

राग:...' पढ़ैत शकुन्तलाक सौन्दर्यक विशद वर्णन करऽ कहय आ अपन अंग-अंग निहारय । सकुचिऐक तँ रुष्ट होअय, कहय जे 'नहि नहि, निर्व्रीड़ मुद्‌घुस्यताम् ।' जखन मुक्त व्याख्या करऽ लगलिऐक तँ झट उठि केबाड़ लगा लेलक—अडैठीमोड़क संग विहुँसऽ लागलि । ओहि दिन तँ कहुना बाँचिकऽ चल अयलहुँ मुदा श्यामानन्द बाबूकेँ कहलियनि — औ महाराज, हमर तँ प्राणेँ अवग्रहमे पड़ल बुझाइछ । ने जानि, की स्थिति आबि तुलयतैक । ओ भभाकऽ हँसलाह, बजलाह—''भाग्येनैतन् संभवति । क्षति की ? झोरक संग जँ माछो थारीमे पड़ि जाय तँ अग्राह्य किएक ?'

मिथिला मिहिरमे प्रकाशित 'महामेघप्रभांश्यामाम्' शीर्षक निबन्धमे काली-स्तुतिश्लोकक विश्लेषण करैत भोग आ त्यागक रहस्यकेँ फरिछौने छथि, जाहिमे हिनक चिन्तन, स्फुरण, विश्लेषण, प्रस्तुतीकरण आ भाषिक आकर्षण-क्षमता एतबे अंशसँ स्पष्ट भऽ जायत —

'एकटा जिज्ञासा । अहाँक विषयमे कहल गेल अछि जे 'भवकालेनृणां सैव लक्ष्मी वृद्धिप्रदा गृहे । लक्ष्मी-रूप तँ जगतक धारक तत्त्व थिक, एहन होयब सर्वथा उचिते । किन्तु ''सैवाभावेतथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोपजायते'क अर्थ-चिन्तन देह सिहरा दैत अछि । बाप रे, दरिद्रता तँ सर्वनाशक पर्याय थिक—करुणामयी माँ, एहन किएक भऽ जाइत छिऐक ? की अतीत वा वर्तमान जन्मक पुण्य-पापक कारणेँ लक्ष्मी-अलक्ष्मीक रूपेँ दर्शन दैत छिऐक ? तखन तँ प्रत्येक ऋषि-मुनि, जे प्राय: लक्ष्मीक कृपासँ रहित रहैत छलाह, पापी छलाह ? की पापी लोके अलक्ष्मीक आश्रय बनैत अछि ? मन नहि मानैत अछि । ओ लोकनि, वस्तुत: लक्ष्मीक कृपाक आकांक्षीये नहि छल होयताह, किएक तँ लक्ष्मीवान लोकक विवेक-विचार प्राय: विनष्ट भऽ जाइत छैक—कतेक अनीति अन्याय दिन-राति ओ करैत रहैत अछि । लक्ष्मी शुद्ध सात्विक मार्गसँ ने अबैत छथिन ने शुद्धता-सात्विकतासँ रहनिहार लग स्थिर भऽ कऽ रहैत छथिन । हुनक वाहन उलूककेँ प्रकाश प्रिये नहि—घोर तममे ओकरा गतिशीलता प्राप्त होइत छैक ।'

गद्यक एहन प्रांजल फड़िच्छ रूप, सेहो पण्डितक लेखनीसँ, मैथिलीमे दुर्लभ अछि । तथापि, हिनक कवि-व्यक्तित्वक समक्ष गद्यकारक व्यक्तित्व कहियो उभरि नहि सकलनि, तकर सर्वाधिक दायित्व हिनकेपर मढ़ल जा सकैछ, कारण ओकरा ई अपन 'नाम' नहि देलथिन ।

मौन साधक

'मोहन' मैथिलीक सर्वप्रधान सर्वव्यापी साप्ताहिक पत्र मिथिला मिहिरक सम्पादकीय विभागक सम्मानित सदस्य रहथि । ई ओ स्थल छलैक जतऽ पहुँचल व्यक्ति सम्पूर्ण मैथिली जगतमे अनायास परिचित-चर्चित भऽ जाइत छल । ताहि स्थानपर ओकर स्थापना-कालसँ सत्रह वर्ष पर्यन्त लगातार रहितो ई अपनाकेँ चर्चाक केन्द्र बनयबासँ सायास बचबैत रहलाह । सायास एहि हेतुएँ जे ओ से स्थान छलैक जाहि ठाम चर्चाक केन्द्र होयबा लेल कोनो आयास नहि करऽ पड़ैक, चर्चासँ बचबेक लेल अतिरिक्त सावधानी राखऽ पड़ैक । से अतिरिक्त सावधानी ई बराबरि रखैत छलाह । एक तँ ई जे जनिकासँ पूर्वक घनिष्ठता नहि छलनि, ताहि आगन्तुक साहित्यकारवर्गसँ बस औपचारिकताक निर्वाह मात्र करैत छलाह । दोसर ई जे कोनो साहित्यिक विवादमे स्वयं रुचि नहि लैत छलाह । तेसर ई जे साहित्यक प्रसंग अपन मान्यताक प्रकाशन तँ करैत छलाह, किन्तु जे लऽ कऽ ओ अपन नामसँ नहि रहैत छलनि, तेँ साहित्यिक समाजक बीच ओहिपर जे प्रतिक्रिया होयबाक चाही से नहि होइत छलैक । नवतावादी आलोचकक ध्यान ओहिपर आकर्षित नहि होइक । चारिम, कोनो सभा-गोष्ठीमे नहि जाथि, भाषण-वक्तव्य नहि देथि ।

एतेक अन्तुर्मुखी ई किएक भऽ गेल छलाह ?

एकर मुख्य कारण ई छल जे वाल्यकालेमे गीताक प्रभाव संस्कारमे आबि गेल छलनि । कर्तव्ये टा इष्ट छलनि, फलक चिन्ता एकदम छोड़ि देने छलाह । ताहि लेल चेष्टाशील होयबाक प्रश्ने ने छलनि ।

'कूदय फानय तोड़य तान' वलाकेँ दुनियाँ मान तँ दैत छैक, मुदा से स्थायी नहि रहैत छैक । स्थायी मान ओकरे भेटैत छैक जकरामे दम रहैत छैक—ई हिनक मान्यता छलनि । ई क्षणिक मानक भूखल नहि रहथि । अपन 'दम'पर हिनका विश्वास छलनि ।

साहित्य हिनका लेल सौख नहि, साधना छलनि । ई मानैत छलाह । जे वाह्य निनादसँ ध्यान टुटैत छैक । तेँ, आँखि-कान मूनिकऽ सरस्वतीक ध्यान करैत छलाह । जीवनक अन्तिम बेलामे जखन साधना सम्मानित भेलनि, साहित्य अकादेमी पुरस्कार भेटलनि,तखन फलक स्वाद चिखलनि आ नीक लगलनि ।

व्यक्ति-रूपमे जतबे विनम्र छलाह, अपन मान्यताक ततबे पक्का रहथि । ककरो जोरसँ नहि कहने होयथिन किछु । तहिना, हिनक सिद्धान्तक आगाँ ककरो जोर नहि चललनि कहियो । कृतज्ञता रोम-रोममे भरल रहनि, शत्रुता ककरोसँ नहि रहनि ।

जाहि उच्च कोटिक सुरभित काव्य-मालासँ मैथिलीक ई श्रृंगार कयलनि, तकर फूल मौलायवला नहि थिक, तकर सुगन्धि मन्द भेनिहार नहि थिक ।

जाहि धाराक ई सिद्ध कवि रहथि, से हिनक परवर्ती कालमे मुख्य धारा नहि रहल । तेँ प्रतिभाक अनुरूप हिनक पूजन नहि भेल, किन्तु ताहिसँ महत्त्व ने ओहि धाराक कम होइत अछि ने हिनक साधनाक । देखाउसमे कोनो धाराक संग नहि बहलाह, अपितु ओहीमे अवगाहन करैत रहलाह जकरा ई गंगा बुझलनि—जकर जल कतबो प्रदूषित होयतैक तैयो गंगाजले रहतैक । आइ काव्य पुन: छन्द दिस, गीत दिस मुड़ि रहल अछि । ओ दिन औतैक जहिया फेर ई मुख्य धारा मानल जयतैक। ओहि दिन एहि मौन साधककेँ श्रद्धापूर्वक लोक पूजत, 'मोहन'क मुरलीक ध्वनि मैथिली-निकुंजमे गूँजि उठत ।

किछु चुनल कविता

बाजि उठल मुरली

सखि हे संकेत-समय बाजि उठल मुरली !
उमड़ि पड़ल मधुक धार
बरसि रहल अमृत-सार
झमकि उठल प्रणय-तार
अधरासव पीबि ककर मातल ई मुरली !
घन-निकुंज सिहरि गेल
सुरभि-पुंज पसरि गेल
ज्ञान-ध्यान हहरि गेल
मनकें झिकझोरि रहल खींचि रहल मुरली !
विमन मान-ग्रन्थि ढील
उखड़ि रहल हठक कील
मानस-नभ नील-गील
यमुना-उर ज्वारि उठल लहरायल मुरली !
किछु कहि मारुत सिहकय
कदमक छवि मोन पड़य
तरसय जी, टीस बरय
नव उमंग नव तरंग भरइत अछि मुरली !
रिक्त घटक पूर्ति-पर्व
अर्थ-हीन आब गर्व
अभिसारक रुचि अखर्व
शारद-रजनीक नोत बाँटि रहल मुरली !

वेणु रटिते रहल

दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल
जी तरसिते रहल, ही उमड़िते रहल
क्यो रसिक श्याम सुधिमे उतरिते रहल
मन हहरिते रहल, तन लहरिते रहल

सुन्न-सन ई किए आइ यमुनाक तट ?
कोन गुम्मी पसरलै कदम तर विकट ?
वैह नचइछ कतहु नाच गोपाल-नट ?
सभ समटि चल गेलै की ओतहि घाट-घट ?

रास-रसमय निमन्त्रण परसिते रहल
आर्तिसँ श्लथ धृतिक ग्रन्थि फुजिते रहल
प्रीति-पथपर मनोरथ चतरिते रहल
दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल

हम किए ठाढ़ि छी मुग्ध जड़ सन एतऽ ?
जानि ने बीति गेलै कते क्षण एतऽ ?
पानि लऽ जाइ घर, आ कि चलि दी ओतऽ ?
देह अँटकल एतऽ, प्राण लटकल ओतऽ

श्याम-घन ओ घुमड़िते-झमकिते रहल
नूपुरक कंकणक ताल झुमिते रहल
आहि रे दैव, जन ई कहरिते रहल
दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल

घाट ई, गोरसक सङ मिलन नव जतऽ
बाट ई, झीक-तीरक महोत्सव जतऽ
राति ई इन्दु छविमे उजागर ककर ?
धाति ई संगमी सुर अलापब ककर ?

त्रास भरिते रहल, टीस बरिते रहल
क्वाथ मथिते रहल, माथ बथिते रहल
सुधि सुनगिते रहल, बुधि पजरिते रहल
दूर कत्तहु मदिर वेणु रटिते रहल

कदम तर के विहँसय ?

घूरि ताकह तरे आँखि, सखि हे
कदम तर के बिहँसय ?
टोक-चालो देखारे करय नहि
सुरे टेरि के बजबय ?

रन्ध्र मुरलीक फूँकय गमेसँ
हेरि कनडेरियेँ ओ क्रमेसँ
मोर-पंखी मुकुट फहराबय
पीत कौशेय पहिरन कँपाबय

कोन ज्वर जोति देलकैक ओकरा
पताइत-पद सिहरय
पैसि रहले केहन रोग छुतहा
कोनादन मन ई करय ?

कोन मदसँ कदम ई सविभ्रम ?
की देखलकै कि झट कंटकित क्रम ?
पड़ि गेलै मोन की जे सुरभिधर ?
कोन पीड़ा जँतलकै कि पीयर ?

पाटि देलकैक के हरियरी ई
वने-वन के बिहरय ?
बेधि देलकै सुरक तीरसँ के
मृगीगण छटपट रहय ?

गोरसक फेरमे पड़ि विवश हम !
आह ! छिछिआइ छी सहि कते श्रम !
नित्य गड़िते रहय कूश-काँटे
कृष्ण नागोक भय बाट-घाटे !

की जनलिऐक जे जोग-टोना
कोनो छेकि दुर्गति भरय ?
आब अनतऽ कोना डेग उठतै
कि तन-मन अनकर बनय ?

एहि भ्रमरक केहन अग्नि-माया
सूनि गुंजन घमय फूल-काया
होइ जकथक उचाटन-भरल सन
आँखि मिलितो लगै अछि विरह-क्षण

चन्द्र-किरणेँ द्रवित चन्द्रकान्ते-
मणिक ई ढाठी धरय
बिना स्पर्शे हुनक लाजवन्ती
किए ई लाजेँ गड़य ?

वसन्त

आयल वसन्त ! आयल वसन्त !
कुसुमित दिगन्त ! सौरभ अनन्त !!
लऽ मद दुरन्त आयल वसन्त !!!
उन्मादक दोलापर झुलैत
मधु-विन्दुक फुचकारी भरैत
बल्लिक अंचल चंचल करैत
मलयानिल नचइत अछि दिगन्त !

क्षण-क्षण मधु मदिरा पीबि-पीबि
शाखाक अंकमे लीबि-लीबि
स्वरमे विह्वलता सीबि-सीबि
पिक गाबि रहल अछि, मद दुरन्त !

शुक-पंखी दल परिधान-भार
मृदु मंजु मंजरिक हेम-हार
रचि बृन्त-थार कुंकुम अपार
सजलनि वनदेवी छवि अनन्त !
वनमे भ्रमरक वीणा बजाय
मनमे मद-कलकलकँ जगाय
जीवनमे नव स्पन्दन बहाय
कण-कणमे हँसइत अछि वसन्त !

बरखा-बुन्नी

आर्द्र मेघक घटा ई घहरि जाइ अछि
तन सिहरि जाइ अछि, मन लहरि जाइ अछि
क्यो जरा गेल छल, रुचि सेरा गेल छल
अग्नि-कणसन मरण-रस हेरा गेल छल
आततायी अपन अन्त अनलक स्वयं
आनकेँ जे जराओत, जरत से स्वयं
पूर्ण मद-मोद तरुपर झहरि जाइ अछि
प्रीति-आँचर लताकेर फहरि जाइ अछि
धन्य ई राज, राजा एहन धन्य ई
जग जुड़ा गेल, तृण-गुल्म-छवि धन्य ई
गंध सोन्हगर बँटै अछि धरा मत्त भऽ
बीज धारण करत ई रसायत्त भऽ
पाबि उन्माद सरिता खहरि जाइ अछि
बन्ध-गत प्रिय-सरक तट भहरि जाइ अछि
श्याम ले' रास-मंचो गगनमे बनल
नृत्य बिजुरिक चलय, मन रमणमे सनल
गीत रिमझिम निनादित-मुदित स्वर मुखर
ताल-कण गोपिका देथि छमछम प्रखर
सृष्टि-क्रम ले' बलाका कहरि जाइ अछि
आँखि अथबल, हमर ही हहरि जाइ अछि

दीप-लास

ई कालरात्रि, ई दीप-लास !
लड़ि रहल प्रकृतिसँ युग-युगसँ
दुर्जेय मानवक दृढ़ प्रयास !!

अति गहन अमा, अति तुच्छ ज्योति-
तेँ की ? अछि भावक अर्थ, मोल
शक्तिक अनुरूप विपत्तिक जे
रोधक चेष्टा तहिमे न झोल
नहि रहि पाओत 'अज्ञेय' आब
नव वामन नपइछ भू-अकास !
जागह दैवी संस्कृतिक दूत
बारह अन्तर्ज्योतिक प्रदीप
डाहह पजारिकऽ ऊक आइ-
आसुरी वृत्तिकेँ, जे समीप

सनठीसँ सूप डेङैने की,
पौरुष-उद्यममे श्रीक वास !

निर्झर

निर्झर रे, अविरल बहइत रह !
धधरा-धूआँ थिक जीवन क्रम
थिक चलब धर्म,तोँ चलइत रह !!
समतल-सौँटल शाद्वल-कोमल
चन्दनक बाट, नन्दनक हाट
ऊभड़-खाभड़, आँकड़-पाथर
कुश-कण्टक-दुर्गम, अघट घाट

दुहू सम, रति की ? किए विरति ?
नियतिक इंगितपर बढ़इत रह !
चलइत-चलइत भऽ क्षीण देह
उद्‌भव-परिवेशक त्यागि नेह
पोषण-स्रोतक भऽ अति विदूर
छौ रुद्ध चरण लिख काल क्रूर
जग उदय-लयक थिक रंग-मंच
अभिनय अलिप्त तोँ करइत रह !
मानल अति कटु आहुति पड़लौ
मधु-मद तरंगमे नहि भरलौ
वन-गिरि रटलेँ घिघरी कटलेँ
उच्छल हिन्दोलन नहि बटलेँ
पसरओ प्रकाश, हुलसओ सुवास,
कर्पूर जकाँ तोँ जरइत रह !

नव युग

नव युग, काल करौट लैत अछि !
सेरा रहल दावाग्नि, चिता-रज
पजरल-पसरल, नभ जरैत अछि !
के जनैत छल लातक धाडल धूलिक कण बिड़रो बनि जायत ?
के कहैत छल अथबल-अजगर गुड़कि-सरकि गिरिपर चढ़ि जायत ?
जन-बलमे फल की अमोघ, से-
भारतसँ दुनियाँ सिखैत अछि !
ढाहल ढाही मारि, उखारल हम पहाड़केँ लड़ि-लड़ि अड़ि-अड़ि
दाहक दीपक ज्योति मिझाओल, हम फनिगा भऽ जरि-जरि मरि-मरि
बालुक पाँतरसँ फल्गूमे
स्रोत फूटि विप्लव रचैत अछि !
'राजा ईश्वर अंश' बिलायल, सामन्तीक धाह पतरायल
'सोन'क चकमक जड़-मन्हुआयल, 'प्रारब्ध'क मारल उधिआयल

टिटही टेकत पर्वत, सरिपों
जन-चैतन्यक युग जगैत अछि !
ऊँच महल चढ़ि जे छथि बैसल, हुनकर मनमे डर छनि पैसल
सोर-पोरसँ गाछे उखरय, ढनमनै'ल अछि कोठी सैंतल
प्रलंयकर ई बाढ़ि तेहन ने,
तुन्दिल जग झुरझुर झँखैत अछि !

उठओ नवका ध्वज

झरल-झखरल गाछ, उसरल हाट !
किए ओगरत, किए ताकत, किए पूछत
कथी ले' क्यो चलत ई वन-बाट !

गाछ ई, जे फेर पल्लवसँ सजत नहि
मदिर मधुमय महमही महिमा भरत नहि
मज्जरक छवि-छटा स्वर्णिम नहि उमड़तै
मंडपायित सघन शाखा नहि चतरतै

बज्रलेपी तुलायल पतझार से, जे
कोकिला-कुल उड़ल पाबि उचाट !
टेक एक रहल सदा जन-हृदय-तर्पण
लोक-हित ले' पत्र-पुष्प-फलक समर्पण
जाड़-रौद-बसात सहि आश्रितक रक्षण
वस्तु दैवक देल पोषण रहल सभ क्षण

सशुचि-अर्चित सरुचि-चर्चित गाछ ई से
रहल उन्नत-दृप्त दीप्त-ललाट !

के पटौतै, के हँटौतै काँट-जंगल ?
जकड़ि बाँझी भरि रहल आमय अमंगल
सभ विटप, सभ वृन्त निर्जीवन-सेरायल
आइ इन्धन-योग्यता-दिन अछि तुलायल

जंगलक ओ मंगलक सभ छवि बिलायल
लागि रहलै' नाव अन्तिम घाट !

जयति नव-गछुली समृद्धि-निधान शीतल !
बढ़ि हरओ जन-ताप, फलसँ भरओ हीतल
गुणक सौरभ दिग्दिगन्त विकीर्ण होअओ
पावि मधु-ऋतु लोक-जड़ता शीर्ण होअओ

पुरनका खसते, उठओ नवका जयध्वज
देखा देअओ अपन रूप विराट !

जोआनी

लक्ष्य पूर्ण विनु कयनहि ठमकय से थिक केहन जोआनी ?
वाटक काँटक डरसँ सिहरय, धिक्-धिक् एहन जोआनी !

थाकत नहि, चलिते जायत जाधरि संकल्प पुरत नहि
खोड़ि-जारि सभ विघ्न, बढ़य आगाँ जे सैह जोआनी !

तोड़ि-फोड़ि चट्टान, वेग दुर्धर लेने पद-पदमे
झर-झर धड़धड़ाय बहइछ निर्झर, से असल जोआनी !

रोकत-छेकत के एकरा ? बिनु झुकनहि झोंक सहत के ?
उद्भट-विकट प्रभंजन ई दुर्दान्त प्रचण्ड जोआनी !

खसल-भसल जँ सत्पथसँ राक्षस भऽ धसत पताले
देवदूत बनि जग तारय, ई सुधरल-सजल जोआनी !

अपन उचित अधिकार छोड़ि, अति शान्ति-जाप थिक पापे
स्वत्व-हेतु संघर्ष करय चिनगी बनि, सैह जोआनी !

समतलमे सभ सहजेँ चलइछ, एहन चलब की पौरुष ?
बाट बनाबय काटि काँट-कुश बलगर-हठी जोआनी !

नियम मानह

व्यवस्था-बन्धन जते, से संतुलन थिक
मूर्ति-भंजक जनु बनह, हित-हानि जानह !

नीचतासँ दस्यु होइछ, असुर होइछ
उच्चतासँ शिष्ट होइछ, देव होइछ
अमर्यादित धाप दऽ जँ दौड़ि बढ़बह
क्षणिक हित, पुनि अन्त दुर्गति, ठेसि खसबह

रोग पोसि, अपथ्य खा, जे किछु मोटयबह
शोथ थिक से, पुष्टता नहि—ध्यान आनह !

स्वस्थ थिक, जे कर्म-सीमा अपन जानय
निज परिधिमे रहि उचित उत्थान जानय
अमृत पीबा-लेल जे नहि माथ कटबय
बली अनयी नहि सहस्रो हाथ छँटबय

स्वर्ग-सुख देवत्व, तपसँ लभ्य सभ थिक
छल-बलेँ अपहरण घातक, गैंठ बान्हह !

सभ सुखी होअओ, निरोग अशेष जनता
सभ कुशल देखओ, जरओ सभ दु:ख-जड़ता

जकर संस्कृति एहन त्यागक, तप-विरागक
से किए असहिष्णु, वशमे द्वेष रागक ?

हेर-फेर कने-मने विधि-परिधिमे शुभ
अराजकता नाशकर, नहि व्यर्थ फानह !

ज्योति साधना

बना सकलहुँ नहि नियतिकेँ अपन औखन !
चकोरक ई आँखि लागल रहल सदिखन
इन्दु दिस, मनकेँ मथैछ अन्हार औखन !

अग्निकण खा-खा सजाओल दाह उरमे
नित्य नव आक्रोश टनकय-बरय रहि-रहि
तरछनक ई आचमन की तृप्ति सिरजत
जी तरसिते रहल, भेँटल भरल घट नहि

उपछि गेलहुँ-ताकि लेलहुँ जलधि-तल रे
छुच्छ सितुआ हाथ, मोती स्वप्न औखन !

हम जते' सस्पृह, तते' निस्पृह बनय ओ
हम सटै' छी, आह ! निर्मम भऽ हँटय ओ
हम करी सत्कार, दुत्कारैछ ओ पुनि
जीव जड़ 'माया' रटय, 'ब्रह्मे' छँटय ओ

लोभ मकरन्दक, वने-वन फूल सेबी
काँट गड़इछ, जुड़ाइछ नहि कंठ औखन !

पाँतरक छी तप्त यात्री, छाँह ताकी
नित उपेक्षा-आगि बरिसय, जरी पाकी
बनब शीतल कोना 'कालिय हृद'क जलसँ
गरलमे छी धँसल रे, भेँटत सुधा की !

नागकेँ नाथी विलक्षण शक्ति नहि से,
गली; स्मृतिमे दीप्त रास-पियास औखन !

के मरल, के जिउल जे नहि मर्म बूझय
यन्त्र थिक से रेखपर जे थमय-घूमय
हृदय-धन हम, नित करी अनुभूति-संचय
भावना धीपय खने, खन भीजि चूमय

विश्व ई थिक 'असत्'-'भ्रम', नहि हृदय मानय
जगाबी हम 'सत्'-'प्रतीति'क ज्योति औखन !

रुदन

कानब सुन क्यो कान न
कानन-सन जग रे
जन बिच दुख:क असर न
अ-सरण सभ लग रे
बीतय यौवन असगर
सगर रयनि दुख रे
अछि नहि शान्तिक लेश
कलेश-मलिन मुख रे

ककरो हृदय कृपा न
कृपान-कुवच कह रे
हम धनि विकल अकेलि
अ-केलि समय बह रे
आयल धृतिक नसाओन
साओन दुर्ग्रह रे
आह ! मुदा मन भावन
भाव न फल लह रे
हमर एखन नहि सुलगन
लग नहि प्रियतम रे
भार लगै अछि जीवन
जीव न अब हम रे

अन्तिम याम

उड़ि रहल गो-धूलि, लग आयल मने घनश्याम !
काज-धाजक मोह त्यागह
अपन बहिरन्तर सजावह
पूर्ण अर्पित भाव आनह, तखन वश रस-धाम !
शिथिल अंग, विशृंखलित मति
असोथकित निजत्व-संगति
बन्धु बन्धन तमक दु:स्थिति, गहह विद्युत्-धाम ।
व्यर्थ परिजन-पुरजनक रुचि
अकाजक सभ नियम संशुचि
किए अचरज जीह कुचि-कुचि, बनह आत्माराम !
पझायल सन मिझायल सन
ढहि रहल रवि, शून्य तन-मन
निशामुख-भासित गगन-वन, दिनक अन्तिम याम !
हे प्रवासी, किए ममता
अपन देशक धरह सुरता
विन्दु जलधिक एकरसता-होयत चिर विश्राम !

ककर की मोल अछि

देखि रहलहुँ हम, ककर की मोल अछि
बरि रहल मणि-दीप 'अलका' महलमे
जमल 'कैलासक कुटी'मे झोल अछि !
त्याग-तपगुण-गौरवेँ नहि मान-फल
पदक-सम्पर्कक उदय-जय भेल छै
धथूरेसँ 'शिव'क पूजन भऽ रहल
'केतकी'क सुवास 'साप'क लेल छै
योग जकरा हाथ मधुवन छै तकर
आन लोकक हेतु जीवन ओल अछि !
जकर सम्हरल धान से हरिऐल अछि !
तकर छै रिमझिम सजल संसार रे
जकर ब्रिगड़ल बात से पियरैल अछि
तकर छै धहधह जरल उद्‌गार रे
असामाजिक विषमतामे हत-हृदय
मनुज अन्त:शून्य खाली 'खोल' अछि !
स्वप्न छल जे घनघटा नभमे सजत
अमृत बरिसत, प्राण पुलकित भऽ उठत
उठल अन्हड़, पड़ल पाथर, विकल जग
टिमटिमाइत जानि ने दीपो रहत
वास्तविकता जे निकट से कर्णकटु
कल्पना दूरक सोहाओन ढोल अछि !
प्रदर्शन अछि इन्द्रजालक चलि रहल
योजनात्मक राजनीतिक वंचना
जीवनक तरु 'वन महोत्सव' सन जरल
छुच्छ रोपण, रुच्छ अछि संवर्धना
काज कौड़ी छदामक नहि भऽ रहल
प्रचारक युग, लाख-कोटिक बोल अछि !
ऊँच गिरि-तरुपर पड़ल नव रवि किरण
कन्दरा-तल-भूमि औखन तम भरल
बढ़ल चमकल अग्रणी, पाछाँ पड़ल
से, हँसेरी भेल जे पाछाँ चलल

स्वराजो भेने खसल जन उठल नहि
ततहि अछि छल जतहि, धरती गोल अछि !
(पन्द्रहो कविता 'बाजि उठल मुरली' सँ)

मनहूस किए तोँ ?

मानव रे, मनहूस किए तोँ ?
निर्भय बन ने, उद्भट तन ने,
डगमगाह पद, झूस किए तोँ ?
बीहड़ वन ई जग थिकैक, तैँ
जखन तखन किछु गड़बे करतौ
घातक जन्तु अभरबे करतौ
झपट-लपट किछु पड़बे करतौ
यथायोग्य झट समाधान हित
जरय छनेमे, फूस किए तोँ ?
एहने नहि जे एतऽ मधुर किछु
छैके नहि, काँटे चतरल छै
नहि रे, सज्जित-सुरभित फूलो
गमकि रहल, मधुओ उमड़ल छै
दगधल ले' छाहरियो छमछम
सचढ़ ताक, नाखूस किए तोँ ?
एते बात धरि गैँठ बान्हि ले
नहि असंयमी बनब नीक थिक
रह अपनहि सीमाधरि, बढ़ नहि,
रेखा छड़पब कोना ठीक थिक ?
धाडब सह नहि, सट नहि गड़ नहि
बनह न तुलिते कूस किए तोँ ?
हाहुत्ती बनि दूहू हाथेँ
, खयबेँ, बहुतो काँट उपजतौ

जे अप्राप्य तदर्थ लोभ-वश
साहस तनबैं उचितो टरतौ
छल-बल ल' जँ सफलो नचबैं
परिणति फसबैं, मूस किए तों ?
पौरुष कर, तन-मनकैं भर
किछुओ नहि थर भऽ भ्रान्त कुबाटे
हुसतौ पयर कि दहि-भसि झखबैं
रह सचेत, नहि नहा कुघाटे
चाही सभखन होश, पिछड़िकऽ
सहबैं घुर्पट-धूस किए तों ?

आजुक गाम

सोन भेल झाम !
वैह गाम, वैह ठाम, नहि ओ छवि धाम !
कर्म-मर्म बूझि जगक, उज्ज्वल व्यवहार
चलइत छल, शौच-सत्य छल जीवन सार
जनपद छल तपोभूमि, ऋषि-मुनि सभ लोक
अधृति-असन्तोषक नहि लेश, दूर शोक
ओ क्रम टूटल, जूटल विकट अर्थ काम !
पण्डित विद्वानक ओ पुण्य-कथा सुप्त
आध्यात्मिक-नैतिक ओ प्रवचन-रस लुप्त
नव बोधक दिन जगलै, फिल्म-चरित-गीत
जतऽततऽ टङघिच्चा राजनीति स्फीत
भौतिक उत्थान-वेग-चक्र बड़ उदाम !
तहिया क्यो मूढ़ो जन शिष्टता-विनय जानय
बूढ़ आ प्रतिष्ठितक सहजें रोचो मानय
बिनु पढ़नहु मर्यादा राखय शुचिये भाखय
तेहने परम्परा कि कलुष-पाँक नहि माखय

ओ प्रभाव सांस्कृतिक उसरल सभ ठाम !
शिक्षा जे आजुक किछु, से बनबै चण्ठ
दुर्लभ विनीत-शिष्ट, सहज सुलभ लण्ठ
शुचि संस्कृति मानय के, सभतरि उत्पात
असुरक अनुकर्ता सभ, जहिँ तहिँ अभिघात
नगरक तँ कथे कोन, भठल-भथल गाम !
ककरो पाहुन अबौक, सभ क्यो चौचंग
झट खगता पूछि जाइ, साजि दैक रंग
आपकता अपनैती ओहन कतऽ आब ?
भरमा-मरजाद-मतिक कतऽ निकट भाव ?
आनकेँ देब थिकै आइ पाप-नाम !
राजनीति फिल्म-रीति बदलि देलक रंग
भौतिक स्वार्थ नीति उग्र दऽ रहलै संग
मानव असंस्कृत जे पशुए थिक शुद्ध
वैह किछु आगाँ बढ़ि दानवो अबुद्ध
शठता-कुटिलता गहि आइ विषम गाम !!
(दुनू कविता 'इतिश्री'सँ)

छौ गीत 'फूलडाली'क

१

प्रेम जीवन, तन प्रेम, प्रियतम ! प्रेम जीवन, तन प्रेम !
प्रेमक कलिका, प्रेमक माला, प्रेमक मधु, प्रेमक मधुशाला,
प्रेमक साकी, प्रेमक प्याला, प्रेम पान नित नेम, प्रियतम !
प्रेमक सरिता, प्रेमक नैया, प्रेमक यात्री, प्रेम खेबैया,
प्रेमक श्रोता, प्रेम गबैया, प्रेमक मंगल क्षेम, प्रियतम !
प्रेमक मन्दिर, प्रेमक प्रतिमा, प्रेमक पूजा, प्रेमक महिमा,
प्रेमक रंग, प्रेम लालिमा, प्रेमक बरइछ टेम, प्रियतम !

२

भरल यौवनमे पड़ल विधवाक दुख । मारि देलक जीवितहि विधवाक दुख ॥
तरेतर धधकैछ निसि दिन वेदना । निधुर घूरक आगि सन विधवाक दुख ॥
धर्म-शास्त्रक शस्त्र बलगर लग विफल । जोर अवलापर, अमिट विधवाक दुख ॥
पुरुष सत्रह घाट घूमौ, दोष नहि । अछि समाजक न्याय धरि विधवाक दुख ॥
देखि रहलहुँ अछि समाजक वंचना । खानगी सब किछु, प्रकट विधवाक दुख ॥
ठोँढ़ धै व्रत करौने की हैत व्रत ? कराबै कत पारणा विधवाक दुख ॥
कामिनी जातिक थिकहुँ, संयम कठिन । चाहनाहर ढेर,ई विधवाक दुख ॥
सुखक दिन ओ अपन, दुखमे नापता । पुरुष जाति कृतघ्न, कटु विधवाक दुख ॥
'खेब ने तँ हैब की ?'-मैनाक परि । छुटै ने जामुन, विकट विधवाक दुख ॥
जते बन्धन तते छी उन्मुक्त हम । वासनामे बहि रहल विधवाक दुख ॥
गर्भ-हत्या सहज, आश्रय देत नहि । जड़ समाज बढ़ा रहल विधवाक दुख ॥

३

धनिक गण ! ध्यान दियऽ करू ने कसाइपना
गरीबक कष्ट बुझू, बिनु दया हो धर्म कहाँ ?
गरीबक ग्रास जथा सूदिमे हथिया लैछी
युधिष्ठिर लाख बनू, किन्तु हैत धर्म कहाँ ?
मड़ैया तोड़ि कते बनल ई कोठा-सोफा
कनै अछि गाम, हँसी एक अहाँ, धर्म कहाँ ?
पड़ोसीकेर नेना अन्न बिनु तड़पै-मुरझै
घटाघट दूध दही खाइ अहाँ, धर्म कहाँ ?
लजाइछ फाटल पट बीच गरीबक गृहिणी
तनल अछि तम्मुक रे टोलहिमे, धर्म कहाँ ?
समाजक बीच अहीँ पंच, अहिँक डाक चलै
गरा रेतैत छी दुखियाक, कहू, धर्म कहाँ ?
चिता धरि जायत ने धन, अयश ठामहि रहते
अतत्तह छोड़ि दियऽ, न्याय बिना धर्म कहाँ ?

४

नर जातिकें निशाचर कै दैछ जमींदारी
बिनु मृत्यु किसानक ई यमराज जमींदारी !
दुखिया किसानमे अछि हाक्रोश पड़ल भूखें
निज मौज मजामे अछि अलमस्त जमींदारी !
कड़कैत रौदमे नित, झहरैत बूंदमे नित
खेती किसान करइछ, फल खाय जमींदारी !
बैसल बिलाइकँ जे भेटैछ तीन बखरा
अछि तकर साफ जीवित दृष्टान्त जमींदारी !
रौदी, कतेक दाहड़ गुजरै किसान ऊपर
निर्विघ्न असूलै अछि निज पोत जमींदारी !
खेतिहर कमाय दिन भरि, नहि अन्न-वस्त्र तकरा
महफिल लगाय बैसल, सुख लैछ जमींदारी !
फूलक तथा सुगन्धिक राजाप्रजाक भीतर
गौरांग प्रभुक वर अछि—ई काँट जमींदारी !
ने बान्ह बन्हाबै अछि, ने नहरि खुनाबै अछि
मोगल जकाँ बकाया लै लैछ जमींदारी.!
आनक बहै पसेना, आराम आन पाबै
अभिशाप अछि किसानक, ई पाप जमींदारी !

५

बोनिक भोजन, बोनिक पहिरन, बोनिक उद्‌गार हमर, बाबू !
बोनिक अछि तन, बोनिक जीवन, बोनिक संसार हमर बाबू !
फाटल-चीटल खड़्की पहिरी, रुख-सुख रोटी-फाँका अधार
अन्हरोखेसँ भरि साँझ कतहु श्रम करी, श्रमिक छी हमं, बाबू !
टटघर, देबाल, कोठा, मन्दिर, महजिद, गिर्जा, चौकी, पलंग
पुल, बान्ह, सबारी सब हमरे निर्माण, श्रमिक छी हम, बाबू !
गामक हम जन-हरवाह और शहरक मजदूर-कुली हमहीं
दुनियामे क्यो ने हमर हाय, हम सभक, श्रमिक छी हम, बाबू !
गृहिणी, नेना-भुटका, अपने किछु आना, किछु सेरक भरपर
दुख बूझै क्यो ने हमर हाय, दुर्भाग्य श्रमिक छी हम, बाबू !
नहि अँचरा बचिया कैं, भ[illegible] ओकँ, गृहिणी[illegible] नूआ

117156
10.12.04

बोनिक कमाइ, अधपेट खाइ, की करू श्रमिक छी हम बाबू !
वर्षा बरसै, घर भरि चूबै, जाड़क ऋतुमे ठिठुरी हम सब
बिन खर कोड़ो, झक-झक हड्डी, दुखमरू श्रमिक छी हम बाबू !
धरतीमे हक नहि हमर हाय, सेबहि टा ले' अछि जन्म भेल
सुख ले' बाबू लोकनि, दुख ले' जीबैत श्रमिक छी हम, बाबू !
बाबू लोकनि, किछु दया करू, हमरहु मनुष्य-जीवन बीतौ
हमरहु पद्धतिमे हो सुधार उद्विग्न श्रमिक छी हम, बाबू !

६

युवक बन्धु, जागू, आगू भै पोछु ने जननिक नोर
शिथिला मिथिला ताकथि अहिँदिस, कत दिन रहब कठोर ?
देश पड़ल अछि दुखक पाहिमे, हाहि कटै बे-छोर
ने व्यवसाय कतहु कोनहु अछि, दैन्य-घटा घनघोर
ने समाज वा साहित्यक दिस ककरहु अछि दृग-कोर
धधकै द्वेषक आगि घरेघर, छूछ गर्व बड़ जोर
कन्या एतय बिकाइछ बाछी-गाय जकाँ ई शोर
बढ़ियाइत नव-विधवा कानथि, बाढ़नि बनलि अथोर
प्रगतिशील जगमे नहि होऊ अहाँ इजोतक चोर
सभक हेतु मधुमास, सहै छी अहाँ शिशिर झिकझोर
उठू, संगठन-शंख बजाऊ, करू सुधारक भोर
'मिथिला-मैथिल-मैथिलीक जय' नाचय सबहक ठोर ।

उपेन्द्र ठाकुर 'मोहन' (1913-'80) वर्तमान युगक शीर्षस्थ कवि रहथि । हिनका विद्यापति-परम्पराक परिवर्धित आधुनिक संस्करणक गीतकार कहल जा सकैछ । हिनक रचनाक अवधि सन् 1930 सँ '80क मध्य धरि अछि । ओहि पचास वर्षक समय, लोक आ साहित्यक सघन प्रभाव जे हिनकापर पड़ळनि तकरे सुसंस्कृत प्रतिफल थिकनि हिनक काव्य । मैथिलीक वीणापर ओहि पचास वर्षमे जे काव्य झंकृत भेल ताहिमे गनल-गुथल अधिक निखरल मुखर ध्वनिमे एक कविवर मोहनोक छनि । ई संस्कृतक पण्डित, मैथिल आचार-विचारक पोषक, परम्पराक समर्थक रहथि, संगहि परिवर्तनक पक्षधर, विकासक संवाहक आ सामाजिक विकृतिक विरोधमे स्वर उठौनिहार साहित्यकारमे अग्रगण्य रहथि । 'बाजि उठल मुरली' काव्यकृतिपर हिनका 1978क साहित्य अकादेमी पुरस्कार सँ अलंकृत कयल गेलनि । ई प्रतिष्ठित मैथिली साप्ताहिक 'मिथिळा मिहिर'क सम्पादकीय विभागक सत्रह वर्ष धरि वरिष्ठ सदस्य रहलाह, जाहि माध्यमे हिनक विलक्षण गद्य-शिल्प सेहो जगजियार भेल।

एहि विनिबन्धक रचयिता डॉ. भीमनाथ झा, जे स्वयं कवि ओ गद्यकार छथि, एक दर्जन सँ अधिक पोथीक लेखक [illegible] अकादेमी पुरस्कार सँ सम्मानिते छथि, मिथि[illegible] सहकर्मी रहि चुकळ छथि, ताहू कारणेँ हुनक व्य[illegible] सँ देखने छथि, जकरा एतऽ सहज आ रोचक [illegible]

Library IIAS, Shimla
MT 817.231 092 T 326 J
00117156

ISBN 81-7201-892-4

पन्द्रह टाका